उपोद्घात

' साध्वी व्याख्यान निर्णयः ' पुस्तक के लेखक पूज्य जैनाचार्य श्री मणिसागरसूरिजी जैन जगत् में सुप्रसिद्ध विद्वान् हैं। आप श्री बृहत्पर्युषणा निर्णयः , आगमानुसार मुहपत्ति निर्णयः, देवद्रव्य निर्णयः एवं कल्पसूत्र अनुवाद आदि कृतियों के द्वारा साहित्य सेवा करके जनता का अच्छा हितसाधन किया है एवं जैनागमों को राष्ट्र भाषा हिन्दी में अनुदित कर जनसाधारण तक पहुंचाने की आपकी योजना अवश्य ही श्लाघनीय है।

इस पुस्तक का विषय नाम से ही स्पष्ट है। आश्चर्य तो इस बात का है कि जिस जैन धर्म ने व्यक्ति स्वातन्त्र्य के चरम विकाश का बीड़ा उठाया। जाति वर्ण और लिंग भेद के महत्व को निर्मूल कर "गुणा-पूजा स्थानं गुणीषु न च लिंगं न च वयः" का आदर्श उपस्थित कर मोक्ष का द्वार प्राणी मात्र के लिए खुला कर दिया उस पवित्र धर्ममें आज साध्वियों के व्याख्यान देने के [illegible] उपस्थित किया जाता है। जिनका जीवन ही स्व-पर कल्याण के लिए, ज्ञान ध्यान उपदेश के लिए है वे यदि व्याख्यान ज्ञान दानआदि न करें? तो क्या करें?

विद्वान् आचार्य श्री ने प्रस्तुत प्रश्न पर शास्त्रीय प्रमाण व युक्तियों के साथ इस ग्रन्थ में यथोचित प्रकाश डाला है अतः मैं उसका पिष्ट पेषण न कर कुछ अपने विचार पाठकों के समक्ष उपस्थित करता हूँ।

जैन धर्म में स्त्री जाति को धार्मिक दृष्टि से पुरुष के समान अधिकार दिया गया है। उसे मानव के अति उच्चतम विकाश केवलज्ञान और मोक्ष तक की अधिकारिणी माना गया है। चतुर्विध संघ में पुरुषों के समान ही साध्वियों और श्राविकाओं का स्थान है, श्वेताम्बर जैनागमों में सैकड़ों साध्वियों [दीक्षित स्त्रियां] के मोक्ष जाने का उल्लेख है। उन्नीसवें तीर्थंकर श्रीमल्लिनाथ भगवान् भी स्त्री जाति के अर्हंत थे। भगवान् ऋषभदेव स्वामी ने अपनी ब्राह्मी सुन्दरी पुत्रियों को ६४ कलाएं सिखाई थीं और वे बाहुबलिके केवल ज्ञानोपार्जन में निमित्त कारण हो कर अन्त में मोक्ष गई। सच्चरित्रता के लिए १६ सतियों के नाम आज भी नित्य प्रातः काल स्मरण किये जाते हैं। प्रत्येक तीर्थङ्कर के संघ में साधु श्रावकों से साध्वी श्राविका की संख्या अधिक थी। उत्तराध्ययन सूत्र में कामवासना के द्वारा संयम मार्ग से विचलित होते हुए रहनेमि को सती राजीमती ने बोध देकर संयम में स्थिर करने का उल्लेख है। ज्ञाता सूत्र में मल्लिकुंवरि [१९वें तीर्थकर] द्वारा ६ मित्र राजाओं के प्रतिबोध एवं सती द्रौपदी का जीवन चरित्र है, अर्थात स्त्री जाति के प्रति भी समान आदर व्यक्त किया गया है।

आज कल के समय में स्त्री व्यक्ति के परिचय देने की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। जगत के बड़े से बड़े व कठिन से कठिन कार्य स्त्रियां कर सकती हैं यह पाश्चात्य देश के विकशित स्त्री समाज व भारतीय महिलाओं में पं० विजय लक्ष्मी, सरोजिनी नायडू, कैप्टन लक्ष्मीबाई आदि ने भली भांति सिद्ध कर दिखाया है। यदि उनके विकाश में कमी है तो उसका उत्तरदायी पुरुष समाज ही है जिसने चिरकाल से स्त्री जाति को हीन समझने और दबाये रखने की नीति धारण कर रखी है। वास्तव में स्त्री और पुरुष में लिङ्ग भेद के शारीरिक भेद के सिवा और कोइ आत्मविकाश के कारणों में भेद नहीं है। वही तेजपुंजमयी आत्मा दोनों के अन्दर

जैन धर्म में द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव के अनुसार प्रवृत्ति करने का आदेश है, अपवाद मार्ग इसी का प्रतीक है। जिस कार्य से वर्तमान काल में अधिक लाभ हो वही करना श्रेयस्कर है । वर्तमान काल में साध्वियों के व्याख्यान देने की बड़ी ही उपयोगिता है क्योंकि साधु लोग अल्प संख्यक है और उनका विहार भी अव्यवस्थित होने के कारण बहुत से स्थानों के श्रावक धार्मिक ज्ञान से वंचित रह जाते हैं , यही कारण है कि लाखों की संख्या में श्रावक लोग अन्य मतावलम्बी होगये हैं । इस दृष्टि से भी साध्वियों के व्याख्यान की बड़ी उपादेयता है इसका फल प्रत्यक्ष है; खरतर गच्छ की विदुषी साध्वियों द्वारा जो धर्म प्रचार हुआ एवं हो रहा है यह सर्व विदित है अतः प्रत्यक्ष परिणाम देखते हुए इसकी उपयोगिता में कोई संदेह नहीं किया जा सकता ।

साध्वियों के व्याख्यान का निषेध करने वाले भी उनके ज्ञान संपादन करने का तो समर्थन ही करते हैं और ज्ञान का विकाश ज्ञान दान के द्वारा होता है, इसके द्वारा वृद्धि प्राप्त होती है अन्यथा विस्मृत हो जाता है अतः साध्वियों के ज्ञान संपादन का लाभ भी जनता को मिलना चाहिए । व्याख्यान देना इसके लिए सुन्दर साधन है और इसे निषेध करना कोई भी विचारशील उचित नहीं समझेगा क्योंकि किसी भी कार्य का उचित और अनौचित्य उसके लाभालाभ पर निर्भर है ।

प्राचीन काल में भी जैनधर्म में अनेकों विदुषी साध्वियां हुई है जिनमें से 'गुण समृद्धि महत्तरा' रचित "अंजना चरित्र" उपलब्ध है । व्याख्यानादि न देने से ज्ञान का उपयोग नहीं होने के कारण ही वर्तमान काल में साध्वियां पठन पाठन में अधिक सचेष्ट नहीं होतीं यदि वे व्याख्यान देना आवश्यक समझेंगी तो उनका [illegible] बढ़ेगा और ज्ञान का विकाश होने के साथ साथ श्रावक श्राविकाओं में भी धार्मिक ज्ञान की वृद्धि होगी और अन्य मतावलम्बी होने से रुक कर [illegible] समाज का लाभ एवं उत्कर्ष होगा ।

अगरचंद नाहटा

साध्वी संघनी उपयोगिता

[illegible] — [illegible] साध्वीजी श्री [illegible] श्रीजी

[illegible] 'समाजमां साध्वीओनुं स्थान' [illegible] उपयोगी [illegible]

[illegible]

हरेक गामोमां ज्यां ज्याँ साध्वीजीओ विराजेल होय छे, त्यां त्यां नानी बाळे लई मोटी वहिनो सुधी ने धार्मिक अभ्यास करावता होय छे, तेमने नवकार थी मांडी ग्रन्थ सुधीनुं ज्ञान साध्वीजीओना प्रतापेज मळ्युं होय छे, साध्वीजीओ पासे स्त्री वर्ग हमेशा अभ्यास करतो अनुभवाये छे साध्वीजीओना प्रतापे जैन स्त्री समाज संयमी,तपस्वी, क्रिया कांडी मर्यादाशील अने धार्मिक अभ्यासमां जेटलो आगल वधेलो देखाय छे, तेना हजारमा अंशे पण साधु समाज थी पुरुष वर्ग धार्मिक बावतों मां आगल वधेलो देखाय छे, ?

पदवी धरोना खरचाने पहोंची वलवा असमर्थ एवा नाना गामडांओ मां धार्मिक श्रद्धा टकावनार तथा सदुपदेश आपनार साध्वीजीओ ए ज छे, पूज्य आचार्यो तथा मुनि पुंगवो, पांच दश थी लई चालीस पचास ठाणा एकज स्थले मोटा मोटा सहेरोमां साथे रहे छे, तेओ माँ व्याख्यानकारतो एकज होय छे, ते सिवायना मुनिराजो शां समाजोपयोगी कार्यो करे छे? पुरुषों अने बालकों ने भणावावानी केटली तकलीफ ले छे तदुपरांत एक बीजा ने भणावी शके तेवा मुनिवर्यो होवाछतां साथेना मुनिओने केम भणावता नथी अने मोटा पगारे पंडितो ने शा माटे रोके छे ?

वरजीवनदास भाई ने साधुओ जेटले अंशे समाजने उपयोगी जणाया छे ते थी अनेक गणो बदलो तेओ अनेक रीतिये समाज पासे थी ले छे जेमके साधुओ पधारे त्यारे मोटुं मोटुं सामैयुं करावबुं, पदवी प्रदान वखते हजारों नाणा खरचाववां, नाम कायम करवा लाखोनी रकम उडावरावबी, वगेरे, आ विचारतां जणाशे के साध्वीओ नो आवा प्रकारनो बोझो समाज उपर नथीज, तेम छतां तेनी उपयोगिता अने सेवा समाज ने घणी जणाय छे, प्रभाविक साधुओ नेए भाई तथा बीजाओ जाणे छे पण प्रभाविक साध्वीजी होय तेनुं जाणता नथी, प्रभाविक साधु कोने कहेवाय ए समझवुं जोइये, मात्र वाग्छटाथी, विद्वत्ता थी के अमुक बे पांच कार्यो करवाथी नथी थइ जवातुं हालना प्रभाविक महात्माओना अन्य प्रभावो पण सर्वनी जाण बहार नथी, जेवां के पोतानी मान्यता साची कराववानी खातर अरसपरस्परमां शिरस्फोटन करावबां, अनाचारीओ ने पडखे उभा रही हसते मुखडे आंख आडा कानकरी नभाव्ये राखवा, अयोग्य वर्त्तणूंक छतां सुशीलतानो ढोल राखवो , आजे धामधूम थी साधु वेशमां ने काले गृहस्थ वेश मां, आ उपरथी समजाशे के जैन शासन नी हेलना करवामां साधुओ ओछा भाँगीदार न थी ते मुकाबले साध्वीओ घणीज पवित्र अने प्रभाविक गणाय, साध्वीओमां अनाचार के वेश पलटो कचित ज बनेल हशे, साधुओनी जेम केटलीक साध्वीओ दीक्षा आपे छे, व्रतोच्चारण विधि पूर्वक करावे छे अने धार्मिक कार्य पण घणांज करावे छे,

चालु सालमां कच्छ प्रान्तमां दशेक गामोमां साधुओना चोमासां हतां, बाकीना घणा गामोमां साध्वीजीओ ना हता ज्यां तेओ व्याख्यान आपतां अने भणावतां पण साध्वीजीओ

४ ॥ आज भोजन करी आवियो, चित्रशाली चित्रकार । एक
अधिकार ॥ ५ ॥

॥ ढाल बीजी ॥

त अरज सुणोनें रुडा राजीया होजी ॥ एदेशी ॥

वे मार एक चित्रमां होजी, ले वे उंचो रे श्वास । क्षणमां क्षणमां कोट ह
ो पिच्छा विलास ॥एह०॥ १ ॥ पांख पांख खंखेरी उतरयो होजी, राता व
मूकि गयो निज स्थानकें होजी, हुओ चित्र प्रकार ॥ एह. । २ ॥ देखी दे
होजी, कहो पशु कहेवाय । एहवे एहवे जय जय रव थयो होजी, कुसुम वृ
० ॥ ३ ॥ सुरवर सुरवर विद्याधर मिल्या होजी, सांभली लोकनी वाणि
केवल साहुणी होजी, आव्यो हुँ इण ठांण ॥एक०।४॥ बोले बोले नरपति सांभल
अचरिज एह । एहवुं एहवुं संभवीयें नहीं होजी, पूछे भगवती नेह ॥एह० । ५
व तेह साधवी होजी, एहमां अचरिज कांय । करमें करमें । शुं नवि संभवे हो
ां ते थाय ॥ एह० । ६ ॥ जेहवां जेहवां शुभाशुभ बांधिआ होजी, तेहवें उद
में अशुभें जल अगनि होये होजी, न्याय ते थाय अन्याय ॥ एह० ॥ ७ ॥ चे
तु होय होजी, घरमां थी मरी जाय । अर्थ अर्थ अनर्थ मित्र वेरीओ होजी, नभ
य ॥ एह. ॥ ८ ॥ शुभथी शुभथी विष अमृत होय होजी, दुर्जन सज्जन हो
श ते जश नीपजे होजी, न हणे युद्धमां कोय ॥ एह० ॥ ६ ॥ पामे पामे अचिं
हुणी बोले नर नाह कोहना कोहना कर्मनी परिणती होजी, बोले साहुण
०॥ माहरा माहरा कर्मनी परिणती होजी, बोले ताम भूपाल । किमते किमते
होजी, साहुणी भांखे रसाल ॥ एह० ॥ ११ ॥

॥ ढाल पांचमी ॥

ठा विरसा पछे रे लो, धर्म थकी । सहु अघ गछे रे लो । बूझी सभा त
बंधुदेव कहे शुभमती रे लो ॥ २३ ॥ धरम अमें अंगीकरुं रे लो, तुम आण
रेलो । जिम सुख देवाणुप्रिया रे लो, विलंब न कीजें ए क्रिया रे लो ॥ २४ ।
व करे रे लो, दान देईनें उद्धरे रे लो । हरिसेन नें राज्यें ठवि रे लो, दीक्षा लीर
रे लो ॥ २५ ॥ पुरुष चन्द्र सूरिनें कनें रे लो, । साथें प्रधान ने परिजनें रे लो
पछें कहीं रे लो, सात मे खंडे ए सही रे लो ॥ २६ ॥

में सर्वांगसुन्दरी नामा साध्वीजी को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ तब
हुई, देवता, विद्याधर आदि केवली साध्वी की सेवा में आये

अर्थोऽनर्थः सुहृद्वैरी, पविः पतति च क्षणात्। शुभे त्वत्र पुनः सर्वं, विपरीतमिदं भवेत् ॥ ३[illegible]
राज्ञोचे कस्य जीवस्य, कर्मेदक् परिणामकृत्। तया प्रोचे ममैवेदं, कर्म खेदं ददौ बहुम् ॥ ३६
प्रोवाचाऽमरसेनोऽथ रसेनोद्भिन्न कण्टकः। कथं वा? किं निमित्तं वा? तत्कर्मेत्यथ सा जगौ॥ ३७

संविग्ना च सभा राजबन्धुदेवौ व्रतोद्यतौ। ऊचतुर्भगवत्यस्ति, जिघृक्षा नौ जिनव्रते ॥ १४४॥
प्रतिबन्धं कृपार्थांमा, तयेत्युक्ता विमौ मुदा। दापयित्वा महादानान्यर्चयित्वा जिनावलीः॥ १४५॥
सम्मान्य प्रणयि व्रातमभिनन्द्य पुरीजनम्। दत्त्वा च हरिषेणस्य, राज्यं निजयवियसः ॥ १४६॥
नृपति र्बन्धु देवेन, प्रधानैश्च निजैःसह । पुरुषेन्द्रगणेःपार्श्वे, प्रव्रज्यां प्रतिपन्नवान् ॥ १४७॥

श्री समरादित्य् केवली रास, श्री पद्म विजयजी कृत प्रकाशक
भीमसी माणेक बम्बई. पृष्ट २९८-९, ३०८

एक दिन जय जय रव थयो, कुसुम वृष्टि सुविशाल रे ॥ ११ ॥ इंणि. ॥ सुरसिद्ध विद्याधर थकी, व्यापी रह्यु आकाश रे ॥ राय पूछे निजपुरुषनें, कहोए किशो प्रकाश रे ॥ इंणि । १२ ॥ खबर करी प्रतिहार ते, भांखे तास निदान रे। इंण नयरीमां पामीयां, साधवी केवल ज्ञान रे ॥ इंणि । १३ ॥ जाणे लोका लोकना, त्रण कालना भाव रे ॥ सुर विद्याधर बहु थूणें, सांभली नरपति तावरे ॥ इंणि ॥ १४॥ हरखी चाल्यो वांदवा, आव्यो उपाश्रय द्वार रे। तोरण थंभने पूतली, ज्यूं विद्युत् झलकार रे ॥ इंणि. । १५ ॥ किहांयक स्फटिक विद्रुमकीहां, किहांयक चामर श्वेत रे ॥ ध्वज शिर उपर फरकतो, कनक किंकिणी समवेत रे ॥ इंणि । १६ ॥ बहु साधुनियें परिवर्यां, तिम श्राविका समुदाय रे। श्रीसम रूपें शोभतां, गुरुणी तिहां देखाय रे ॥ इंणि । १७ ॥ भवसागर तरियां जिके, गुण मणि रयणभंडार रे। शशिसम वयण शोभा [illegible], नाशित तम अंधकार रे ॥ इंणि । १८ ॥ श्वेतांबरथी साहुणी, स्तवता भूपति ताम रे। [illegible] भूपने, करे पंचांग प्रणाम रे ॥ इंणि । १९ ॥ बेठो धर्म श्रवण भणि, धर्म [illegible] तिणे समे, सारथ वाह सुत ताम रे ॥ इंणि । २० ॥ बंधुदेव [illegible], [illegible] निज निज नार रे। परमगुरु प्रणमी करी, साहुणी प्रणमे सार रे ॥ इंणि [illegible] पछेथी पापनियार रे। पद्म विजय कहे सांभलो, सुणतां जय [illegible] रे ॥ इंणि । २[illegible] ॥

दोहा —

[illegible] कहे नृप सांभलो, मन करजो मन मोद। अद्भुत एक दीठु अमें, सांभल जो तस [illegible] विस्मय थयो, रहि न शकुं हुं राज्य, विस्मय पाम्यो श्रीसमी, अर्थ न जाणे [illegible] भगवती प्रत्यें, दाखो नृप कहे ठीक। असंभाव्य अद्भुत किश्युं, है [illegible] सागर कहे मुक्त सहचरी, हाथे खोयो हार। अतीत काल कोइ उपर

वीसरीओ इंण वार ॥ ४ ॥ आज भोजन करी आवियो, चित्रशाली चित्रकार। एक वधु अचरिज इहां भांखु ते अधिकार ॥ ५ ॥

॥ ढाल वीजी ॥

॥ अरज अरज सुणोंनें रुडा राजीया होजी ॥ एदेशी ॥

एहवे एहवे मोर एक चित्रमां होजी, लेवे उंचो रे श्वास। क्षणमां क्षणमां कोट हलावतो होजी, कीधो पिच्छा विलास ॥एह०॥ १ ॥ पांख पांख खेरी उतर्यो होजी, राता वस्त्र मां हार। मूकि मूकि गयो निज स्थानकें होजी, हुओ चित्र प्रकार ॥ एह. । २ ॥ देखी देखी विस्मय उपनो होजी, कहो पशु कहेवाय। एहवे एहवे जय जय रव थयो होजी, कुसुम वृष्टि ते थाय ॥ एह० ॥ ३ ॥ सुरवर सुरवर विद्याधर मिल्या होजी, सांभली लोकनी वाणि। पाम्यां पाम्यां केवल साहुणी होजी, आव्यो हुँ इण ठांण ॥एक०।४॥ बोले बोले नरपति सांभलो होजी, सांसु अचरिज एह। एहवुं एहवुं संभवीयें नहीं होजी, पूछे भगवती नेह ॥एह०। ५॥ भांखे भांखे तव तेह साधवी होजी, एहमां अचरिज कांय। करमें करमें शुं नवि संभवे होजी नियमा सफलां ते थाय ॥ एह० । ६ ॥ जेहवां जेहवां शुभाशुभ वांधिआ होजी, तेहवें उदयें रे थाय। अशुभें अशुभें जल अगनि होये होजी, न्याय ते थाय अन्याय ॥ एह० ॥ ७ ॥ चंद चंद तिमिर हेतु होय होजी, घरमां थी मरी जाय। अर्थ अर्थ अनर्थ मित्र वेरीओ होजी, नभथी अगनि वरसाय ॥ एह. ॥ ८ ॥ शुभथी शुभथी विष अमृत होय होजी, दुर्जन सज्जन होय अपजश अपजश ते जश नीपजे होजी, न हणे युद्धमां कोय ॥ एह० ॥ ६ ॥ पामे पामे अचिंती संपदा होजी, सुणी बोले नर नाह कोहना कोहना कर्मनी परिणती होजी, बोले साहुणी एह ॥ एह. ॥१०॥ माहरा माहरा कर्मनी परिणती होजी, बोले ताम भूपाल। किमते किमते शुं निमित्त कहो होजी, साहुणी भांखे रसाल ॥ एह० ॥ ११ ॥

॥ ढाल पांचमी ॥

मुख मीठा विरसा पछें रे लो, धर्म थकी। सहु अघ गछे रे लो। वूझी सभा तव भूपति रे लो; बंधुदेव कहे शुभमती रे लो ॥ २३ ॥ धरम अमें अंगीकरुं रे लो, तुम आणा अमें शिरधरुं रेलो। जिम सुख देवाणुप्रिया रे लो, विलंब न कीजें ए क्रिया रे लो ॥ २४ ॥ अठाई महोत्सव करे रे लो, दान देईनें उद्धरे रे लो। हरिसेन नें राज्यें ठवि रे लो, दीक्षा लीये ज्यूं सुरगवी रे लो ॥ २५ ॥ पुरुष चन्द्र सूरिनें कनें रे लो, । साथें प्रधान ने परिजनें रे लो पांचमी ढाल पर्यें कहीं रे लो, सात मे खंडे ए सही रे लो ॥ २६ ॥

उपर के दोनों पाठों में सर्वांगसुन्दरी नामा साध्वीजी को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ तब आकाश से पुष्पों की वर्षा हुई, देवता, विद्याधर आदि केवली साध्वी की सेवा में आये, राजा भी वन्दना करने को आया, सवों ने उनकी स्तुति की, उपाश्रय को देव विमान जैसा

अर्थोऽनर्थः सुहृद्वैरी, पविः पतति च क्षणात्। शुभे त्वत्र पुनः सर्वं,विपरीतमिदं भवेत् ॥ ३५
राज्ञोचे कस्य जीवस्य, कर्मेदक् परिणामकृत् । तया प्रोचे ममैवेदं,कर्म खेदं ददौ बहुम् ॥ ३६॥
प्रोवाचाऽमरसेनोऽथ रसेनोद्भिन्न कण्टकः। कथं वा? किं निमित्तं वा? तत्कर्मेत्यथ सा जगौ॥३७॥

संविग्ना च सभा राजबन्धुदेवौ व्रतोद्यतौ। ऊचतुर्भगवत्यस्ति,जिघृक्षा नौ जिनव्रते ॥१४४॥
प्रतिबन्धं कृपाथांमा,तयेत्युक्ता विमौमुदा। दापयित्वा महादानान्यर्चयित्वा जिनावलीः॥१४५॥
सम्मान्य प्रणयि व्रातमभिनन्द्यपुरीजनम्। दत्वा च हरिषेणस्य,राज्यं निजयवियसः ॥१४६॥
नृपति र्बन्धु देवेन, प्रधानैश्च निजैःसह । पुरुषेन्द्रगणेःपार्श्वे, प्रव्रज्यां प्रतिपन्नवान् ॥ १४७॥

श्री समरादित्य केवली रास, श्री पद्म विजयजी कृत प्रकाशक भीमसी माणेक बम्बई. पृष्ठ२९८-९, ३०८

एक दिन जय जय रव थयो, कुसुम वृष्टि सुविशाल रे ॥ ११ ॥ इंणि. ॥ सुरसिद्ध विद्याधर थकी, व्यापी रह्यु आकाश रे ॥ राय पूछे निजपुरुषनें, कहोए किशो प्रकाश रे ॥ इंणि । १२ ॥ खबर करी प्रतिहार ते, भांखे तास निदान रे। इंण नयरीमां पामीयां, साधवी केवल ज्ञान रे ॥ इंणि । १३ ॥ जाणे लोका लोकना, त्रण कालना भाव रे ॥ सुर विद्याधर बहु थूणे, सांभली नरपति तावरे ॥ इंणि ॥ १४॥ हरखी चाल्यो वांदवा, आव्यो उपाश्रय द्वार रे। तोरण थंभने पूतली, ज्यूं विद्युत् झातकार रे ॥ इंणि. । १५ ॥ किहांयक स्फाटिक विद्रुमकीहां, किहांयक चामर श्वेत रे ॥ ध्वज शिर उपर फरकतो, कनक किंकिणी समवेत रे ॥ इंणि । १६ ॥ बहु साहुणियें परिवरयां, तिम श्राविका समुदाय रे। श्रीसम रूपें शोभतां, गुरुणी तिहां देखाय रे ॥ इंणि । १७ ॥ भवसागर तरियां जिके, गुण मणि रयणभंडार रे। शशिसम वयण शोभा [illegible], नाशित [illegible] अंधकार रे ॥ इंणि । १८ ॥ श्वेतांबरथी साहुणी, स्तवता भूपति ताम रे। [illegible] करें [illegible], करे पंचांग प्रणाम रे ॥ इंणि । १९ ॥ बेठो धर्म श्रवण भणि, धर्म [illegible] ताम रे। [illegible] तिणे समे, सारथ वाह सुत ताम रे ॥ इंणि । २० ॥ बंधुदेव [illegible], [illegible] निज निज नार रे। परमगुरु प्रणमी करी, साहुणी प्रणमे सार रे ॥ इंणि [illegible] ॥ [illegible] ढाल ए, पद्दैली पापनियार रे। पद्म विजय कहे सांभलो, सुणतां आ[illegible] रे ॥ इंणि । [illegible] ॥

दोहा —

[illegible] कहे नृप सांभलो, मन करजो मन खेद । अद्भुत एक दीठु अमें, सांभल जो [illegible] । [illegible] विस्मय थयो, कहि न शकुं हुं राज्य, विस्मय प्रेर्यो वीसमी, अर्थ न आ[illegible] । [illegible] डाचो नृप कहे ठीक; । असंभाव्य अद्भुत किश्[illegible] । [illegible] सागर कहे मुझ सहचरी, हाथें ग्योयो हार। अतीत काल कोइ आ[illegible]

बीसरीओ इंण चार ॥ ४ ॥ आज भोजन करी आवियो, चित्रशाली चित्रकार । एक थयुं अचरिज इहां भांखुं ते अधिकार ॥ ५ ॥

॥ ढाल बीजी ॥

॥ अरज अरज सुणोनें रुडा राजीया होजी ॥ एदेशी ॥

एहवे एहवे मोर एक चित्रमां होजी, लेवे उंचो रे श्वास । क्षणमां क्षणमां कोट हलावतो होजी, कीधो पिच्छा विलास ॥ एह० ॥ १ ॥ पांख पांख खंखेरी उतर्‍यो होजी, राता वस्त्र मां हार । मूकि मूकि गयो निज स्थानकें होजी, हुओ चित्र प्रकार ॥ एह. । २ ॥ देखी देखी विस्मय उपनो होजी, कहो एशुं कहेवाय । एहवे एहवे जय जय रव थयो होजी, कुसुम वृष्टि ते थाय ॥ एह० ॥ ३ ॥ सुरवर सुरवर विद्याधर मिल्या होजी, सांभली लोकनी वाणि । पाम्यां पाम्यां केवल साहुणी होजी, आव्यो हुँ इण ठांण ॥ एक० ॥ ४ ॥ बोले बोले नरपति सांभलो होजी, सांचु अचरिज एह । एहवुं एहवुं संभवीयें नहीं होजी, पूछे भगवती नेह ॥ एह० । ५ ॥ भांखे भांखे तव तेह साधवी होजी, एहमां अचरिज कांय । करमें करमें ; शुं नवि संभवे होजी नियमा सफलां ते थाय ॥ एह० । ६ ॥ जेहवां जेहवां शुभाशुभ बांधिआं होजी, तेहवें उदयें रे थाय । अशुभें अशुभें जल अगनि होये होजी, न्याय ते थाय अन्याय ॥ एह० ॥ ७ ॥ चंद चंद तिमिर हेतु होय होजी, घरमां थी मरी जाय । अर्थ अर्थ अनर्थ मित्र वेरीओ होजी, नभथी अगनि वरसाय ॥ एह. ॥ ८ ॥ शुभथी शुभथी विष अमृत होय होजी, दुर्जन सज्जन होय अपजश अपजश ते जश नीपजे होजी, न हणे युद्धमां कोय ॥ एह० ॥ ९ ॥ पामे पामे अचिंती संपदा होजी, सुणी बोले नर नाह कोहना कोहना कर्मनी परिणती होजी, बोले साहुणी एह ॥ एह. ॥ १० ॥ माहरा माहरा कर्मनी परिणती होजी, बोले ताम भूपाल । किमते किमते शुं निमित्त कहो होजी, साहुणी भांखे रसाल ॥ एह० ॥ ११ ॥

॥ ढाल पांचमी ॥

मुख मीठा विरसा पछे रे लो, धर्म थकी । सहु अघ गहे रे लो । बूझी सभा तव भूपति रे लो; बंधुदेव कहे शुभमती रे लो ॥ २३ ॥ धरम अमें अंगीकरुं रे लो, तुम आणा अमें शिरधरुं रेलो । जिम सुख देवाणुप्रिया रे लो, विलंब न कीजें ए क्रिया रे लो ॥ २४ ॥ अठाई महोत्सव करे रे लो, दान देईनें उद्धरे रे लो । हरिसेन नें राज्यें ठवि रे लो, दीक्षा लीधे ज्यूं सुरगवी रे लो ॥ २५ ॥ पुण्य चन्द्र सूरिनें करें रे लो, । साथें प्रधान ने परिजनें रे लो पांचमी ढाल पर्म कही रे लो, सात मे खंडे ए सही रे लो ॥ २६ ॥

उपर के दोनों पाठों में सर्वांगसुन्दरी नामा साध्वीजी को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ तब आकाश से पुष्पों की वर्षा हुई, देवता, विद्याधर आदि केवली साध्वी की सेवा में आये, राजा भी वन्दना करने को आया, सर्वों ने उनकी स्तुति की, उपाश्रय को देव विमान जैसा

सुशोभित किया, सबने पंचांग नमस्कार किया, और धर्मदेशना सुनने को बैठे, तब केवली साध्वीने 'स्वर्णवर्णा वितर्दिकः' अर्थात्-कनक के वर्ण जैसी देदीप्यमान वेदिका के ऊपर उच्चासन पर बैठ कर दान शील तप भाव रूप चार प्रकार के धर्म का स्वरूप वाली विस्तार से धर्मदेशना दी, तथा अपने ही पूर्वकृत कर्मों की विचित्रता बतलायी. शुभाशुभ कर्मों का फल और संसार की असारता दिखलायी, जिसको सुनकर राजा आदि सभा को प्रतिबोध हुआ, उसके बाद राजा ने अपने राज कुमार को राज्यासन पर बैठाकर अठाई महोत्सव पूर्वक मंत्री आदि के साथ आचार्य महाराज के पास में दीक्षा ग्रहण की।

श्री हरिभद्र सूरिजी महाराज का बनाया हुआ 'प्राकृत समरादित्य केवली चरित्र' जो कि "समराइच्च कहा" नाम से प्रसिद्ध है। प्राचीन और सर्व मान्य है उसमें उपरोक्त अधिकार आया है, इसके अनुसार "संक्षिप्त समरादित्य चरित्र" तथा "रास" बनाया है उसमें साध्वी को केवल ज्ञान उत्पन्न होने पर देवताओं ने महोत्सव किया, देव विद्याधर राजा आदि मनुष्यों की पर्षदा मिली, साध्वी को सब ने पंचांग नमस्कार किया, देशना सुन कर राजादि ने प्रतिबोध पाकर दीक्षा लेने का खुलासा लिखा है।

इसी प्रकार अन्य सामान्य साध्वियों के विषय में भी पुरुषों की सभा में धर्मोपदेश देने का अधिकार जैन शास्त्र रूपी समुद्र में पाठकों को अनेक जगह देखने को मिल सकेगा। यह ग्रन्थ पूरा पढ़ने का प्रयत्न करें।

जब साध्वी के पास धर्म देशना सुनने को देवता और राजादि बड़े पुरुष आते हैं तब विनय धर्म की मर्यादा रखने के लिये और श्रोताओं को अच्छी तरह प्रतिबोध होने के लिये साध्वी को बैठने का उच्चासन होना आवश्यक होजाता है। अतः साध्वी को पाट पर बैठ कर देशना देने में शंका लाने वालों को यह बात दीर्घ दृष्टि से गंभीरता पूर्वक विचार करने योग्य है। और देवताओं के साथ देवी, विद्याधरों के साथ विद्याधरी, राजा आदि मनुष्यों के साथ रानी आदि स्त्रियाँ धार्मिक देशना के अवसर में गुरु वंदनार्थ स्वभाविक साथ में जाती हैं, यह प्रसिद्ध बात है। तथा देशना की सभा में लौकिक व्यवहार और धार्मिक मर्यादा का पूरा विवेक रक्खा जाता है, अतः सभा में पुरुषों को आगे बैठना और स्त्रियों को पीछे बैठना स्वाभाविक ही सिद्ध है। उपरोक्त शास्त्रीय प्रमाण भी यही बात सिद्ध करते हैं। कई महाशय [illegible] व्याख्यान में स्त्रियों को आगे और पुरुषों को पीछे बैठाने की बात करते हैं [illegible] यह बात [illegible] से व्यर्थ हो जाता है।

निवेदकः—

सूरि शिष्य मुनि-विनय सागर

* प्रस्तावना *

भारतीय संस्कृत के निर्माण और विकास में जैन श्रमण श्रमणियों का सहयोग अमूल्य है। भारत के प्राचीन सांस्कृतिक इतिहास पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट विदित होता है कि इस वर्ग ने आत्म कल्याण के साथ ...तिक साहित्य निर्माण करने की बहुमूल्य सहायता प्रदान कर भारत को गौरवान्वित किया है। इस प्रकार ...स्कृतिक साहित्य प्राचीन संस्कृति का पोषक ही नहीं अपितु नवीन संस्कृति का पथ प्रदर्शक भी है। ...नाव तो प्रत्येक देश के राष्ट्र निर्माण से ऐसे त्यागियों की ही परमावश्यकता है। जहां पर त्याग और ... का समन्वय हो वहां पर तो पूछना ही क्या!

जैन समाज के कुछ समझदार मुनियों ने आवाज उठाई है कि जैन साध्वियों को सभा में व्याख्यान ... का अधिकार नहीं है, क्योंकि इसमें मुनियों का अनादर होता है। मेरी अल्प बुद्धि के अनुसार मैं कह ... कि ये लोग प्राचीन साहित्य के तलस्पर्शी अध्ययन और वर्तमान शिक्षा प्रणालिका के सौभाग्य से संभवतः ... है। प्राचीन जैनागमों में एतद्विषयक जो महत्व पूर्ण उल्लेख आये हैं उन सभी उल्लेखों का प्रस्तुत ...के लेखक ने बड़ी योग्यता व सफलता के साथ वर्णन किया है, जो लेखक के प्रकांड आगमिक ज्ञान का ... है, इसके अतिरिक्त यह बात व्यवहारिक ज्ञान से भी जानी जा सकती है कि प्राचीन काल में ऐसी ... साध्वियां हुई हैं जिनमें से बहुतों ने बड़े बड़े मुनियों को संयम से विचलित होते बचाया है, संयम में स्थिर किये, जैन धर्म के चौबीस तीर्थ करों में स्त्री तीर्थंकर भी थीं। उन्होंने जो उपदेश राजकुमारों को ...बोधार्थ दिया था वह कितना महत्वपूर्ण है (ज्ञाता धर्म कथा) इसका कितना सुन्दर असर हुआ।

बाहुबल जी जैसे अभिमानी को उनकी बहन ब्राह्मी सुन्दरी जैसी साध्वी ने पिघला दिया और गर्व ...हुआ ... । राजीमति जिनका शुभाभिधान प्रातः उठते ही गौरव के साथ लिया जाता है, उन्होंने रथ नेमिको संयम ...चलित होते रोका था, जैसा कि उत्तराध्यनादि सूत्रों से फलित होता है। अतिरिक्त अनेक ऐसे उदाहरण ... जा सकते हैं जिनसे मालूम होगा कि मुनि जीवन की रक्षा के इन साध्वियों ने आत्मों उपदेशों से कितना ...त पूर्ण कार्य किया।

मध्य कालीन प्राचीन हस्त लिखित साहित्य देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है उसमें मैं दावे के साथ कह ...ा हूं कि अनेक ऐसे ग्रन्थ मिले हैं जिनकी लेखिका साध्वियां थीं। सौ से ऊपर प्रशस्तियें मैंने एकत्रित की हैं

आज का युग प्रगतिका है, खोज का है, प्रत्येक धर्म राष्ट्र समाज अपने अपने उत्थान के लिये ...रात ... करते हैं। पर ऐसी स्थिति में जैन समाज के एक महत्व पूर्ण अंग की अपेक्षा कैसे की जा सकती है, ... लोग तो धर्म प्रचार करते ही हैं पर जहां उनका पहुंचना नहीं होता और वहां पर यदि साध्वीएं आत्म ...ी से मुमुक्षुओं को उपदेश देकर उनकी जैन धर्म विषयिक तृष्णा की तृप्ति करें तो क्या बुरा है?

अपितु एक महत्व के कार्य की पूर्ती होती है, यदि इन साध्वियों की शिक्षा की ओर यदि समाज विशेष

✻ श्री वीतरागाय नमः ✻

साध्वी व्याख्यान निर्णयः

१—जैन शासन में जिस तरह से तीर्थंकर भगवान को और अन्य सामान्य साधुअ
। धर्मोपदेश देने का अधिकार है, उसही प्रकार स्त्री तीर्थंकरी और अन्य सामान
ाध्वियों को भी भव्य जीवों के हित के लिये धर्मोपदेश देने का समान अधिकार है
तलिये प्रत्येक बुद्धों से प्रतिबोध पाये हुये जितने सिद्ध होते हैं उससे कहीं अधिव
ाध्वियों से प्रतिबोध पाये हुये पुरुष संख्यात गुणे अधिक सिद्ध होते हैं, इस विषय क
वरण नन्दीसूत्र की टीकादि सर्व मान्य प्राचीन शास्त्रों में है। खरतरगच्छ तपगच्छ
दि सर्व गच्छों के पूर्वाचार्यों को भी यह बात मान्य है, किन्तु वर्तमान कालमें
नसुन्दरजी (घेवर मुनिजी) आदि कई महानुभाव साध्वियों को स्त्री-पुरुषों की सभा में
र्मोपदेश देने का निषेध करते हैं, परन्तु प्राचीन किसी भी शास्त्र का प्रमाण नहीं बतलाते
। केवल अपनी मान प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए और साध्वी समाज को अपने नीचे दबाये
ाने के लिए पुरुष प्रधान धर्म का बहाना लेकर व्याख्यान बांचने वाली साध्वी और
ाने वाले श्रावक समुदाय पर अनेक प्रकार के आक्षेप करते हैं और व्यर्थ कुयुक्तियों
अप्रासंगिक बातें बनाकर जैन समाज में मिथ्या भ्रम फैलाते हैं इसलिये आज हम
स्त्रीय प्रमाणानुसार अपने निष्पक्ष दृष्टि से विचार प्रगट करते हैं, जिसे पाठक गण
ानुरागी होकर इसे संपूर्ण पढ़कर सत्य का ग्रहण करें।

२—जैन श्वेताम्बर समाज में अभी प्रायः सात सौ साधु और दो हजार लगभग
ध्वियों का समुदाय होगा। किन्तु साधु समुदाय में प्रभाव शाली व्याख्यान बांचने
य सौ साधु निकलने भी कठिन प्रतीत होते हैं और मारवाड़ दक्षिण मालवा आदि
तों में व्याख्यान योग्य प्रभाविक साधुओं का विहार भी कम होता है। जिससे प्रति
। श्वेताम्बर जैन समाज का धार्मिक ह्रास हो रहा है। ऐसी दशा में विदुषी साध्वियां
। नगरों में विहार करती हुई और वर्षा काल में (चौमासा में) ठहरती हुई, श्रावक-
विकाओं के समुदाय में धर्मोपदेश द्वारा अनेक भव्य जीवों को धर्म मार्ग में प्रवृति
ाती हुई तथा व्रत पच्चक्खाणादि धर्म कार्यों से समाज का हित करती हुई शासन की
। करें तो कितना बड़ा महान् लाभ हो सकता है, इस प्रकार के धार्मिक कार्यों में
ा पहुँचा कर समाज और धर्म को हानी पहुँचाने के लिये साध्वियों को व्याख्यान
ाने का निषेध करना उचित नहीं है।

अतिप्रसक्तः खल्वेषोऽर्थः यदनन्तरसूत्रे रोगिप्रभृतीनामन्तरगृहे थानादीनामनुज्ञा कृता। एवं हि तत्र स्थानादिपदानि कुर्वन्। कश्चिद् धर्मकथामपि कुर्वीत, ततश्चातिप्रसङ्गो भवति। अतोऽन्योऽपि भैक्षगतो मा गाथोपदेशादिकं कार्षीदितीदं सूत्रमारभ्यते ॥ ४८६६ ॥

अनेन सम्बन्धेनायातस्यास्य व्याख्या–नो कल्पते निर्ग्रन्थानां वा निर्ग्रन्थीनां वा अन्तरगृहे यावत् चतुर्गाथं वा पञ्चगाथं वा आख्यातुं वा विभावयितुं वा कीर्तयितुं वा प्रवेदयितुं वा। एतदेवापवदन्नाह–"नऽन्नथ" इत्यादि "न कल्पते" इति योऽयं निषेधः स एकज्ञाताद्वा एकव्याकरणाद्वा एकगाथाया वा एकश्लोकाद्वा अन्यत्र मन्तव्यः सूत्रे च पंचम्याः स्थाने तृतीयानिर्देशः प्राकृतत्वात्। तदपि च एकज्ञातादि व्याख्यानं स्थित्वा कर्त्तव्यम्। नैव 'अस्थित्वा' भिक्षां पर्यटतोपविष्टेन वा इति सूत्रार्थः॥

ऊपर के पाठ का भावार्थ इस प्रकार है—विहार करके आये हुए साधु-साध्वी दूसरे उपाश्रय के अभाव में अथवा रोगादि कारण से किसी अन्तरगृह में, यानी-गृहस्थों के घरों के बीच में ठहरे हों अथवा गोचरी आदि के निमित्त गये हों। तब उन से कोई गृहस्थ धर्म का स्वरूप पूछें तथा अन्य किसी कारण वश वहां पर उन्हें धर्म कथा कहनी पड़े व धर्मोपदेश देना पड़े तो साधुओं को अथवा साध्वियों को यावत् चार पांच गाथाओं का अर्थ करके आख्यान करना, विभावन करना, कीर्तन करना और प्रवेदन करना नहीं कल्पता है। किन्तु छोटासा एक दृष्टान्त देकर, एक प्रश्न का उत्तर देकर एक गाथा का या एक श्लोक का अर्थ कह कर संक्षेप में धर्मोपदेश कहना कल्पता है। वह भी खड़े खड़े कहना कल्पता है।

जिस पर भी गृहस्थों के घरों में बैठ कर विस्तार से धर्मोपदेश देने वाले को अनेक दोषों का प्रसंग बताया है। इस विषय में लघु भाष्य का गाथाओं का विवरण करते हुए टीकाकार महाराज ने बहुत खुलासा लिखा है। छपा हुआ बृहत्कल्प सूत्र भाग चौथा पृष्ठ १२३४ से १२३९ तक पाठकगण देख सकते हैं।

५—और भी छपे हुये पृष्ठ १२३९ में इस विषय का दूसरा पाठ इस प्रकार है।

नो कप्पति निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा अंतरागिहंसि इमाइं पंच महव्वयाइं सभावणाइं आइक्खित्तए वा विभावित्तए वा किट्टित्तए वा

पवेयत्तए वा, नऽन्नत्थ एगनाएण वा जाव सिलोएण वा, से वि य ठिच्चा नो चेव णं अठिच्चा ॥ २१ ॥

अस्य व्याख्या प्राक्सूत्रवद् द्रष्टव्या। न वरं "इमानि" स्वयमनुभूयमानानि पञ्चमहाव्रतानि "सभावनानि" प्रतिव्रतं भावनापञ्चकयुक्ता-न्याख्यातुं वा विभावयितुं वा कीर्तयितुं वा प्रवेदयितुं वा न कल्पन्ते। आख्यान नाम साधूनां पञ्चमहाव्रतानि पञ्चविंशतिभावनायुक्तानि षट्कायरक्षणसाराणि भवन्ति। विभावनं तु-प्राणातिपाताद् विरमणं यावत् परिग्रहाद् विरमणमिति। भावनास्तु-"इरियासमिए सयाजए" (आव० प्रति० संग्र० पत्र ६५८-२ इत्यादि) गाथोक्तस्वरूपाः। षट्कायास्तु पृथिव्यादयः। कीर्त्तनं नाम-या प्रथमव्रतरूपा अहिंसा सा भगवती सदेव-मनुजाऽसुरस्य लोकस्य पूज्या द्वीपः त्राणं शरणं गतिः प्रतिष्ठेत्यादि, एवं सर्वेषामपि प्रश्नव्याकरणाङ्गोक्तान्- (संवराध्ययनानि ५ तः १०) गुणान् कीर्त्तयति। प्रवेदनं तु महाव्रतानुपालनात् स्वर्गोऽपवर्गो वा प्राप्यत इति सूत्रार्थः ॥

अर्थ—इसका अर्थ भी इस ही प्रकार है कि—साधु साध्वियों को गृहान्तर में पच्चीस भावना सहित पांच व्रतोंका विस्तार पूर्वक वर्णन करना-आख्यान-विभावन कीर्तन और प्रवेदन करना नहीं कल्पता है। परन्तु पहिले के पाठ में स्पष्ट रूप से बताया है कि एक दृष्टान्त यावत् एक श्लोक का अर्थ खड़े खड़े संक्षेप में कहना कल्पता है। किन्तु बैठ क नहीं कल्पता है। १-साधु के पांच महाव्रतों की पच्चीस भावनाओं का स्वरूप, छः का जीवों की रक्षा का स्वरूप वर्णन करना सो आख्यान कहा जाता है २-प्राणातिपात : विरमण यावत परिग्रह से विरमण त्याग करने का, इरियासमिति आदि का यत्न कर का और पृथ्वीकाय आदि त्रस स्थावर की रक्षा करने का उपदेश देना विभावन कह जाता है। प्रथम महाव्रत अहिंसा भगवती देव, मनुष्य, असुर आदि तमाम लोक की पूजनीया है। तथा द्वीप समान शरण देने वाली रक्षण करने वाली है। और उत्तम गति देने वाली है। अहिंसा में ही सर्व धर्म प्रतिष्ठित हैं सर्व धर्मों में अहिंसा ही मूल रूप से व्यापक है।

एवं प्रश्न व्याकरण सूत्र के पांच से दश अध्ययन तक संवर अध्ययन आदि मे गुण वर्णन करना अहिंसा की महिमा बतलाना ये कीर्तन कहलाता है।

४—महाव्रता के शुद्ध पालन करने से देवलोक अथवा मुक्ति की प्राप्ति होती है इत्यादि वर्णन करना प्रवेदन कहलाता है। इसमें आख्यान १, विभावन २, कीर्तन ३, प्रवेदन ४ इन चारों का भावार्थ एकसा ही है।

५—इस प्रकार ऊपर के दोनों पाठों में साधु साध्वियों को गृहस्थों के घरों में विस्तार से धर्मोपदेश देने की आज्ञा दी नहीं अपितु निषेध है। परन्तु कारणवश संक्षेप में धर्मोपदेश देने की आज्ञा भी दी है। इससे अपने ठहरने के उपाश्रय, धर्मशाला आदि में विस्तार से धर्मोपदेश देने की आज्ञा हो ही चुकी है।

इस सूत्र पाठ में धर्मोपदेश देने के लिये साधु और साध्वी दोनों को समान रूप से अधिकारी बतलाया है। इसलिये साधुओं की तरह साध्वी भी धर्मोपदेश कर सकती हैं। जिस प्रकार गृहस्थों के घरों में स्त्री-पुरुष दोनों साथ में धर्मदेशना सुन सकते हैं। उसही प्रकार उपाश्रय, धर्मशाला आदि में भी दोनों एक साथ बैठ कर धर्मोपदेश सुन सकते हैं। इस में कोई प्रकार का दोष नहीं आसकता।

६—ऊपर के दोनों पाठों का विवेचन घेवरमुनिजी (ज्ञानसुन्दरजी) अपने बनाये शीघ्रबोध नामक पुस्तक भाग १९ वाँ रत्नप्रभाकरज्ञानपुष्पमाला फलोदी से प्रकाशित (बारह-सूत्रों का भाषान्तर) में बृहत्कल्प सूत्र का सार लिखकर छपे हुये पृष्ठ ३० में इस प्रकार लिखा है।

"(२२) साधु साध्वियों को गृहस्थ के घर में जाकर चार पांच गाथ (गाथा) विस्तार सहित कहना नहीं कल्पे। अगर कारण हो तो संक्षेप से एक गाथा, एक प्रश्न का उत्तर एक वागरणा (संक्षेपार्थ) कहेना, सोभी ऊभा रहके कहेना परन्तु गृहस्थों के घर पर बैठ के नहीं कहना। कारण मुनीधर्म है सो निःस्पृही है। अगर एक के घर पे धर्म सुनाया जावे तो दूसरे के वहां जाना पड़ेगा, नहीं जावे तो राग द्वेषकी वृद्धि होगी। वास्ते अपने स्थान पर आये हुवे को यथा समय धर्म देशना देनी ही कल्पे"।

(२३) "एवं पांच महाव्रत पच्चीस भावना संयुक्त विस्तार से नहीं कहना अगर कारण हो तो पूर्ववत एक गाथा वा एक वागरण कहना सोभी खड़े खड़े।"

ऊपर के लेख में साधु साध्वियों को गृहस्थों के घरों में विस्तार के साथ धर्मोपदेश देना नहीं कल्पता है, परन्तु कारण वश संक्षेप में उपदेश देना कल्पता है और अपने स्थान पर उपाश्रय में आये हुये भव्य जीवों को धर्म उपदेश देना कल्पता है, इसमें साधु साध्वियों को धर्मदेशना देने का समान अधिकार ज्ञानसुन्दरजी खुद लिखते हैं। जिस पर भी अब साध्वियों को धर्म देशना देने का निषेध करते हैं यह उनका प्रत्यक्ष मिथ्या हठाग्रह है।

७—जयपुर के जैन श्वेतांबर संघ की जैन धर्मशाला के ज्ञान भण्डार में सम्वत् १६१[illegible] आसोज वदी ७ दिने लिखी हुई, एवं तपगच्छीय श्री देवेंद्रसूरिजी महाराज विरचित

प्रकाशित हुआ है पृष्ठ ९-१० में ऐसा पाठ है—

"पत्तेय सयंबुद्धा बुद्धे, य बोहिया मुणेयव्वा। एय सयंसंबुद्धा, बुद्धीहिय बोहिया दोण्णि॥३५॥ दारं "पत्तेय" गाहा-पत्तेयबुध्धा एके १ 'सयं-(बुध्धा) बुद्धेहिं बोहिया, स्वयमात्मना, स्वतः परतो वा बुद्धा। स्वयंबुद्ध-बुध्धास्तैर्बोधिता द्वितीओ वियप्पो॥ २॥ एवं सयंबुध्धा तातिओ॥ ३॥ बुध्धीहिय वियप्पिया दोण्णि विगप्पा-बुध्धीहिं इत्थीहिं बोहियाओ मणुस्सित्थीओ॥ ४॥ बुध्धीहि य बोहिया मणुस्सा केवला मिस्सा वा॥ ५॥ एवं पञ्चभेदा इति गाथार्थः॥ ३५॥

अर्थः—इस पाठ में प्रत्येक बुद्ध तथा बुद्धबोधित और स्वयंबुद्ध इन तीनों का एक एक भेद बतलाया है। और बुद्धि अर्थात् साध्वियों के उपदेश से प्रतिबोध पाये हुए सिद्धों के दो भेद बतलाये हैं। साध्वियों से प्रतिबोध पाई हुई केवल मनुष्य स्त्रियां और स्त्री-पुरुष दोनों सामिल मिले हुए मिश्र। इस प्रकार साध्वियों से विशेषतः प्रतिबोध पाये हुए स्त्री पुरुष दोनों प्रकार के सिद्ध होते हैं।

१०—फिर भी सिद्ध प्राभृत की पृष्ठ १२ पहली पुठी पर ऐसा पाठ है—

"बुद्धीहिं य बोहिया दोण्णि विगप्पा" तदाह-बुद्धीहिं बोहियाणं वीसा पुण होई एक्कसमएणं। बुद्धीहिं बोहियाणं वीसपुहुत्तं तु सिद्धाणं॥ ५४॥ दारं॥ "बुद्धीहिं बोहियाणं" गाहा-बुद्धीहिं बोहियाणं वीसा। तथा बुद्धीहिं चेव बोहियाणं पुरिसाईणं सामण्णेणं वीस पुहुत्तं सिज्झति। जओ बुद्धीओ सयंबुद्धीओ मल्लिपमुहाओ अण्णाओ य सामण्णसाहुणी-पमुहाओ बोहिंति अओ जइवि चिरन्तण टीकाकारेण सव्वत्थ एयं ण लिहियं। तथाऽप्यवगम्यत इति गाथार्थः॥ ५४॥

अर्थ—बुद्धि अर्थात् साध्वियों के प्रतिबोध दिये हुए एक समय में वीस पुरुष सिद्ध होते हैं। तथा साध्वियों के प्रतिबोध दिये हुये पुरुष आदि शब्द से पुरुष और स्त्री दोनों का ग्रहण करना चाहिये। यह सामान्य से वीस प्रथक्त्व सिद्ध होते हैं, इस प्रकार स्वयंबुद्धि श्रीमल्लिनाथ स्वामी आदि स्त्री तीर्थंकरी और अन्य सामान्य साध्वियों से प्रतिबोध पाये हुए सिद्ध होते हैं।

देखिये—तपगच्छीय श्रीक्षेमकीर्तिसूरिजी विरचित "बृहत्कल्प वृत्ति" तथा पूर्व-धर आचार्य का बनाया हुआ "सिद्धप्राभृत" तथा तप गच्छ के श्री देवेन्द्रसुरिजी महाराज

की बनाई हुई "सिद्धपंचाशिकावचूर्णि" एवं श्रीमलय गिरिजी रचित "नन्दी सूत्र की टीका" आदि के प्राचीन पाठ जो कि ऊपर लिख दिये गये हैं उनसे स्पष्ट प्रकट है कि साधुओं के उपदेश से प्रतिबोध पाये हुए जीव जिस प्रकार सिद्ध होते हैं, उस ही प्रकार बुद्धि अर्थात् साध्वियों के उपदेश से प्रतिबोध पाये पुरुषादि भी सिद्ध होते हैं, इससे साध्वियों को भी साधुओं की तरह श्रोताओं के सामने धर्म देशना देने का अधिकार सिद्ध है।

११—यहां पर कई महाशय ऐसी भी शंका कर बैठेंगे कि "सिद्ध प्राभृत" आदि उपर्युक्त प्रमाणों के अनुसार साध्वियों को धर्मोपदेश देना कहा गया है। इससे सामान्यतया पुरुषों के आगे व्यक्तिगत रूप से धर्मोपदेश देने का सिद्ध हो सकता है। परन्तु स्त्री-पुरुषों की सभा में व्याख्यान रूप में धर्मदेशना देने का सिद्ध नहीं हो सकता। ऐसा कथन भी अनसमझ का ही प्रतीत होता है। क्योंकि देखिये—

"बुद्धिओ सयंबुद्धिओ मल्लिपमुहाओ अण्णाओ य सामण्ण साहुणीपमुहाओ बोहिंति ॥"

सिद्धप्राभृत के इस पाठ में जैसे श्री मल्ली तीर्थंकरी के लिए उपदेश देना लिखा है वैसे ही अन्य सामान्य साध्वियों के लिए भी उपदेश देने का लिखा है। इसलिए जिस तरह स्त्री पुरुष आदि की परिषदा में (सभा में) स्त्री तीर्थंकरी मल्ली आदि के लिए व्याख्यान [illegible] है, उसी प्रकार सामान्य साध्वियों के लिए भी स्त्री पुरुषों [illegible] रूप में धर्मदेशना देने का सिद्ध होता है। इसलिए सामान्य [illegible] की सभा में [illegible] आदि की सभा में व्याख्यान देने का निषेध नहीं कर सकते। [illegible] के समान ही सामान्य साध्वियों के लिए धर्मोपदेश देने [illegible] सामान्य [illegible] के सामने [illegible] देने का कोई निषेध नहीं कर सकते।

[illegible] और भी प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

[illegible] जो कि श्री [illegible] [illegible] पृष्ठ में ऐसा [illegible]

[illegible]

वुड्ढाणं तरुणाणं रत्ति अज्जा कहेइ जो धम्मं । सा गणिणी गुणसागर पडिणीआ होइ गच्छस्स ॥ ११६ ॥

व्याख्या—" वुड्ढाणं "—वृद्धानां स्थविराणां—तरुणानां—यूनां—पुरुषाणां केवलानामकेवलानां वा " रत्तिं " ति " सप्तम्या द्वितीया " (८-३-१३७ इति प्राकृतसूत्रेण सप्तमीस्थाने द्वितीयाविधानात् रात्रौ या आर्या गणिनी " धम्मं " ति धर्मकथां कथयति, उपलक्षणत्वाद्दिवसेऽपि या केवलपुरुषाणां धर्मकथां कथयति, गुणसागर ! हे इन्द्रभूते ! सा गणिनी गच्छस्य प्रत्यनीका भवति, अत्र च गणिनी ग्रहणेन शेषसाध्वीनामपि तथा विधाने प्रत्यनीकत्वमवसेयमिति । ननु कथं साध्व्यः केवल पुरुषाणामग्रे धर्मकथां न कथयन्ति उच्यते—यथा साधवः केवलानां स्त्रीणां धर्मकथां न कथयन्ति, तथा साध्व्योऽपि केवलानां पुरुषाणामग्रे धर्मकथां न कथयन्ति, यत उक्तं श्री उत्तराध्ययने:—

" नो इत्थिणं कहं कहित्ता हवइ स निग्गंथे । तं कहमिति ? आयरियाह· निग्गंथस्स खलु इत्थाणं कहं कहेमाणस्स बंभयारिस्स बंभचेरे संका वा कंखा वा वितिगिच्छा वा समुप्पज्जेज्जा, भेदं वा लभेज्जा, उम्मायं वा पाउणिज्जा दीहकालियं वा रोगायंकं भवेज्जा, केवलिपन्नताओ वा धम्माओ भंसिज्जा तम्हा खलु निग्गंथे नो इत्थीणं कहं कहेज्ज" त्ति नो "इत्थीणं" ति—नं स्त्रीणां एकाकिनीनां कथां कथयिता भवति । यथदं दशब्रह्मचर्यसमाधिस्थानमध्ये द्वितीयं ब्रह्मचर्यसमाधिस्थानं साधुनामुक्तम्, तथा साध्वीनामप्येतत् युज्यते, तच्च साध्वीनां पुरुषाणामेव केवलानां कथाया अकथः भवतीति तथा "स्थानाङ्गेऽपि" "नो इत्थीणं कहं कहेत्ता हवइ" इदं नः ब्रह्मचर्यगुप्तीनां मध्ये द्वितीयगुप्तिसूत्रं, अस्य वृत्तिः—"नो स्त्रीणां केवलानामिति गम्यते । धर्मदेशनादिलक्षणवाक्यप्रतिबंधरूपामित्यादि" यथा च

न केवलं पुरुषाणां साध्व्यो धर्मकथां कथयन्तीति । गाथाछन्दः ॥ ११६ ॥

अर्थः—वृद्ध हो या जवान हो केवल पुरुषों के सामने दिन में अथवा रात्रि में गणिनी अर्थात्– वृद्ध साध्वी धर्म कथा कहे— धर्म उपदेश देवे तो वह साध्वी गच्छ की प्रत्यनीक (विरोधक) होती हैं। यहाँ पर गणिनी कहने से अन्य सामान्य साध्वियों का ग्रहण कर लेना चाहिये। अर्थात्–कोई भी साध्वी केवल अकेले पुरुषों की सभा में धर्मकथा अर्थात्–व्याख्यान नहीं बाँच सकती, परन्तु स्त्री–पुरुष दोनों की सभा में व्याख्यान बाँच सकती है। जिस प्रकार साधु को केवल स्त्रियों के सामने धर्मकथा कहने का निषेध है उसी प्रकार केवल पुरुषों की सभा में साध्वियों को भी धर्मकथा कहने का निषेध है। श्री "उत्तराध्ययन" सूत्र के ब्रह्मचर्य समाधिस्थान अध्ययन के एवं स्थानाङ्ग सूत्र के पाठ के प्रमाण से भी यही बात सिद्ध की गई है कि– जो साधु होता है वह स्त्रियों में धर्मकथा न करे अगर करे तो उसके ब्रह्मचर्य की हानि होती है। उसी प्रकार साध्वी भी पुरुषों की सभा में धर्मकथा न करे, यदि करे तो उसके भी ब्रह्मचर्य की हानि होवे। संयम धर्म में ब्रह्मचर्य की रक्षा साधु-साध्वी दोनों को समान रूप से करना आवश्यक है। इसलिए साधु केवल स्त्रियों का और साध्वी केवल पुरुषों का परिचय न करें। परन्तु धर्म-देशना स्त्री-पुरुष दोनों की सभा में दोनों ही दे सकते हैं।

१९—श्री विजयसेनसूरिजी का सेनप्रश्नः— श्री हीरविजयसूरिजी महाराज का [illegible] की बनाई हुई "गच्छाचार पयन्ना" की टीका के प्रमाण "[illegible]" एवं [illegible] सभा में व्याख्यान नहीं बाँच सकता, उसी प्रकार साध्वी भी [illegible] स्त्री–पुरुष दोनों की [illegible]

उक्तः, उपदेशान्ते चोक्तं-असारा राज्यश्रीः। दुःखं विषयसुखं। पापकार्यान्नियमान्नरकगतिः।

इस पाठ का भावार्थ यह है कि-नमिराजा युद्ध करने के लिये गया था। जब मिथिला नगरी में ठहरी हुई सुव्रता साध्वी ने लोगों के मुख से यह बात सुनी। तब विचार किया कि मान के वश युद्ध में अनेक प्राणियों का नाश होगा। इसलिए मैं उसके पास जाकर उन लोगों को उपदेश देकर युद्ध की हिंसा के पाप से बचाऊँ और उपशांत भाव प्राप्त कराऊँ ऐसा विचार कर साध्वी ने अपनी बड़ी गुरुणी की आज्ञा लेकर अन्य साध्वियों के साथ में सुदर्शनपुर में नमिराजा की फौज में गई, नमिराजा ने साध्वी को वंदना की, तथा बैठने के लिये आसन दिया, नमिराजा भूमि पर सामने बैठ गया। तब साध्वी ने अर्हन्त भगवान के धर्म का उपदेश दिया और उपदेश के अन्त में फिर कहा कि- इस संसार में राज्य लक्ष्मी असार है, विषयसुख दुःखरूप हैं। पाप कर्म करने से नियम पूर्वक नरक गति में जीव जाता है, इत्यादि उपदेश देकर युद्ध बंद करवाया और अनेक जीवों की रक्षा की।

१८—महोपाध्याय श्रीभावविजयजी गणि कृत उत्तराध्ययन सूत्र की वृत्ति में भी छपे हुए पृष्ठ २१८ में ऐसा पाठ है—

"तच्च श्रुत्वा जनश्रुत्या, सुव्रतार्या व्यचिन्तयत्।
इमौ जनक्षयं कृत्वा, मास्म यातामधोगतिम् ॥ १९९॥
तदेनौ बोधयामीति, ध्यात्वाऽऽपृच्छ्यमहत्तराम्।
साध्वीभिः संयुता सागात्समीपे नमिभूभुजः ॥ २००॥
तां प्रणम्यासनं दत्वा, नमिर्भुवि निविष्टवान्।
आर्यापि धर्ममाख्याय, तमेवमवदत्सुधीः ॥ २०१॥
राजन्नसारा राज्यश्री भोगाश्चायतिदारुणाः।
गतिः पापकृतां च स्यान्नरके दुःखसंकुले ॥ २०२॥

इस पाठ में भी यही बात बतलाई गई है कि-अन्य साध्वियों के साथ में सुव्रता साध्वी नमिराजा के पास में गई। राजा ने वंदना की और साध्वी को बैठने के लिये आसन दिया, आप भूमि पर सामने बैठ गया, साध्वी ने भी धर्म का व्याख्यान किया और युद्ध न करने के लिये राजा को उपदेश दिया।

१९—श्री कमलसंयमोपाध्याय विरचित "सर्वार्थसिद्धि" टीका-सूत्रवृत्ति सहित छपे हुए पृष्ठ १९४ पर ऐसा पाठ है—

"प्रणम्य तां नमिर्बद्धाञ्जलिर्दत्तासनोऽविशत् ।
तत्पुरो भुवि साप्युच्चैस्तेने कुशलदेशनाम् ॥ १२६ ॥

इस पाठ में भी साध्वी के सामने राजा हाथ जोडकर बैठा तब साध्वी ने कुशल देशना दी अर्थात्-अच्छी देशना दी धर्म का व्याख्यान दिया। यहां यह बात खुलासा है कि- ऊपर के पाठ में राजा के आगे देशना देने का कहा है, परन्तु वहां राजा अकेला नहीं था। अनेक जन थे। सब के सामने साध्वी ने धर्म देशना का व्याख्यान सुनाया और देशना के अन्त में राजा को युद्ध बंद कर देने का उपदेश दिया है।

२०—इसी तरह से संवत् ११२९ में बृहद्गच्छीय श्री नेमिचन्द्र सूरिजी की बनाई हुई "सुखबोधा" नामा टीका जो कि-आत्मवल्लभसारकग्रन्थमाला से प्रकाशित हुई है। पृष्ठ १४०-१४१ में ऐसा पाठ है—

"लोगपारंपरओ निसुयं सुव्वयइज्जाए। चिंतियं च-मा जणवयक्खयं काऊण अहरगइं वच्चंतु, ता दो वि गंतूण उवसमावेमि। गणिणीए अणुन्नाया साहुणिसहिया गया सुदंसणपुरं। दिट्ठो य अज्जाए नमिराया। दिन्नं परमासणं। वंदिऊण नमी उवविट्ठो धरणीए। साहिओ अज्जाए असेससुहकारओ जिणिंदप्पणीओ धम्मो। धम्मकहावसाणे भणियं-महाराय! असारा रज्जसिरी, विवागदारुणं विसयसुहं, अइदुक्खपउरेसु विरुद्धपावयारीणं नियमेण नरएसु निवासो हवइ।"

[illegible] इस टीका में भी यही बात बतलाई गई है कि- साध्वी ने राजा के आगे [illegible] देशना [illegible] जिनेन्द्र प्रणीत धर्म कहा अर्थात् धर्मदेशना दी तथा देशना के [illegible] राजा को युद्ध न करने का उपदेश दिया।

[illegible] तपगच्छीय आदि सब टीकाओं में साध्वी [illegible] राजा को युद्ध न करने का अलग अलग खुलासा बतलाया है।

[illegible] कि [illegible] पुत्र था और यह [illegible] इसलिये [illegible] उसको युद्ध न करने के लिए [illegible] व्याख्यान बांचने का अधिकार [illegible] क्योंकि [illegible]

[illegible] अधिकार [illegible]

किसी बड़े स्थान में बड़े पुरुषों के पास जाना होता है तब पहिले शिष्टाचार की अच्छी अच्छी बातें किये बाद में फिर जिस उद्देश्य से गये हों उस विषय की बातें निकाली जाती हैं। इसही तरह से सुव्रता साध्वी भी नमिराजा की फौज में गई जब राजा ने साध्वी को वन्दना करके बैठने के लिए आसन दिया और आप हाथ जोड़ कर सामने भूमि पर बैठ गया। तब साध्वी ने पहिले धर्मदेशना दी और देशना के अन्त में युद्ध न करने का उपदेश दिया इसही लिए शास्त्रकारों ने "उपदेशान्ते चोक्तं", "आर्यापिधर्ममाख्याय", "कुशलदेशनाम्" और "धम्मकहावसाणे भणियं" इत्यादि वाक्यों में धर्मदेशना देने का अधिकार पहिले बतलाया है इससे प्रगटतया हर एक साध्वी को व्याख्यान वांचने का अधिकार ऊपर में बतलाये हुए शास्त्रों के प्रमाण से सिद्ध है।

२२—दूसरी बात यह है कि—"बुद्धीहि य बोहिया मणुस्सा केवला मिस्सा वा" "सिद्धप्राभृत" का यह पाठ ऊपर बतला चुके हैं, इस पाठ में साध्वियाँ केवल अकेले पुरुषों को अथवा स्त्री-पुरुष दोनों को धर्मोपदेश दे सकती हैं, तथा "आर्द्धा मिश्रितानां कारणे केवलानाम् च पुरस्तादुपदेशः" यह "सेन प्रश्न" का पाठ भी ऊपर बतला चुके हैं। इसमें भी यही बतलाया है कि-साध्वियाँ स्त्री-पुरुषों की सम्मिलित सभा में और कारण वस केवल पुरुषों की सभा में भी धर्मदेशना दे सकती है, यह नियम शास्त्रानुसार है और सुव्रता साध्वी ने भी खास युद्ध का कारण उपस्थित होने पर नमिराजा के समक्ष में पुरुषों की सभा में देशना दी है। इसलिए उत्तराध्ययन सूत्र की टीकाओं के पाठों के अनुसार जो कि ऊपर लिख चुके हैं उस मुआफिक सुव्रता साध्वी की तरह सब साध्वियों को धर्म देशना देने का अधिकार सिद्ध होता है, और इसही के अनुसार सब साध्वियें भी धर्मदेशना दे सकती हैं तथा "कुशलदेशनाम्" "आर्यापिधर्ममाख्याय" "उपदेशान्ते चोक्तं" "धम्मकहावसाणे भणियं" आदि उपर्युक्त विशेषण ही साध्वियों के लिए धर्मदेशना का अधिकार सिद्ध करते हैं। यहाँ देशना कहने से सभा में धर्मोपदेश का व्याख्यान समझना चाहिये।

२३—जिस तरह सुव्रता साध्वी ने अपने गृहस्थावस्था के पुत्र के उपर अनुकंपा करके युद्ध की हिंसा के पाप से उसको बचाया और अनेक जीवों का उपकार किया, इसी तरह से पंच महाव्रत धारी संयमी साध्वीयों के भी धर्म पक्ष में श्रावक-श्राविकायें पुत्र-पुत्रियों के तुल्य हैं। उन्हों के उपर साध्वियों उपकार बुद्धि से अनुकम्पा लाकर उन्हों को आश्रव-कषाय आदि के पाप से बचाने के लिए और धर्म मार्ग में व्रत नियम करने की प्रवृत्ति कराने के लिए अवश्य ही व्याख्यान वांच कर सद्बोध का धर्मोपदेश दे सकती हैं। इसमें किसी प्रकार अंतराय देना योग नहीं है। देखिये– शास्त्रों में कहा है कि भगवान की वाणी के सद्बोध का एक भी वचन धारण करने वाले भव्य जीवों को महान् लाभ होता है। और साध्वियों व्याख्यान वांच कर गाँवों गाँवों में प्रति वर्ष लाखों जीवों को भगवान् की

साध्वी के सद्बोध के वचन सुनाती है इसमें अनेक जीवों का कल्याण है, ऐसे लाभ के काम को समझे बिना पक्षपात के वश होकर अभिनिवेशिक मिथ्यात्व के हठाग्रह से साध्वियों को व्याख्यान वांचने का निषेध करने वाले बड़ी भारी कर्म की अंतराय बांधते हैं।

२४—श्रीहरिभद्र सूरिजी महाराज के बनाये हुए "संबोध प्रकरण" जो कि वि० सं० १९७२ एवं सन् १९१६ ई० में "जैन ग्रन्थ प्रकाशक सभा" अहमदाबाद से प्रकाशित हुआ है। उसके पृष्ठ १९ में ऐसी गाथा है—

"केवल थीणं पुरओ वक्खाणं पुरिसअग्गओ अज्जा। कुव्वंति जत्थ मेरा नडपेडगसंनिहा जाण ॥१॥"

इस गाथा में साफ लिख दिया है कि–साधु अकेली स्त्रियों की सभा में और साध्वी केवल पुरुषों की सभा में व्याख्यान वांचे तो उन साधु-साध्वियों की नट पेटक जैसी कुचेष्टा जानना चाहिये। इस गाथा में जब साधु को अकेली स्त्रियों की सभा में व्याख्यान वांचने का निषेध किया है तब स्त्री-पुरुष दोनों की सभा में व्याख्यान वांचने की स्पष्ट आज्ञा सिद्ध हुई। इसही तरह से साध्वियों को भी जब अकेले पुरुषों की सभा में व्याख्यान वांचने का निषेध किया तब स्त्री-पुरुष दोनों की सभामें व्याख्यान वांचने की आज्ञा सिद्ध हो ही चुकी।

श्री सागरानन्द सूरिजी (आनन्द सागरजी) ने "सुबोधिका टीका" छपवाते समय उसके प्रथम पृष्ठ में पंक्ति १०-११ में "केवलथीणं पुरओ" ऊपर की गाथा के प्रथम चरण के ये आठ अक्षर छोड़-कर इस प्रकार पाठ दिया है–"वक्खाणं पुरिस पुरिओ अज्जा, कुव्वंति जत्थ मेरा नडपेडगसंनिहा जाण।" ऐसी अधूरी गाथा छपवा कर साध्वियों के व्याख्यान वांचने मात्र का निषेध करने के लिए अर्थ का अनर्थ कर डाला है। यह कार्य आत्मार्थियों का नहीं है। क्योंकि पूर्वाचार्य प्रणीत ग्रन्थों का मूल पाठ उड़ा कर अर्थ का अनर्थ कर डालना सभ्यता के खिलाफ है। सूत्र ग्रन्थों का एक भी अक्षर या बिन्दु वा मात्रा उड़ा देना या बदल देना अनन्त संसार का कारण माना जाता है। अपनी हठ की पुष्टि के लिए ऐसा कार्य करना उचित नहीं है सत्यान्वेषियों को पर्युषणा पर्व जैसे धार्मिक पर्व के व्याख्यान में ऐसी उन्मार्ग की प्ररूपणा कदापि नहीं करनी चाहिये।

२५—श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज विरचित–आगमोदय समिति की तरफ से छपी हुई "दशवैकालिक" सूत्र की बड़ी टीका के पृष्ठ २३७ में आठवें अध्ययन की तेपन की गाथा में धर्म कथा विधि संबंधी ऐसा पाठ है—

"नारीणां, स्त्रीणां न कथयेत्कथां, शङ्कादिदोषप्रसङ्गात्, औचित्यं विज्ञाय पुरुषाणां तु कथयेत्, अविविक्तायां नारीणामपीति।"

इस पाठ का भावार्थ ऐसा है कि साधु को स्त्रियों की सभा में धर्मकथा नहीं करनी चाहिये, केवल स्त्रियों की सभा में धर्मकथा करने पर लोगों को शङ्का का स्थान होता है और ब्रह्मचर्य हानि आदि अनेक दोषों का प्रसङ्ग प्राप्त होता है, इसलिये साधु स्त्रियों की सभा में धर्मकथा न कहे परन्तु पुरुषों की परिषदा साथ में हो तो धर्मकथा कह सकता है, यहां पर धर्मकथा कहने से धर्मदेशना समझना चाहिये, इसी पाठ का आशय लेकर "हीर प्रश्नोत्तराणि" में श्रीहीरविजयसूरिजी महाराज ने खुलासा कर दिया है कि— साधु अकेली स्त्रियों की परिषदा में व्याख्यान नहीं वांचे, इसी तरह साध्वी भी केवल पुरुषों की परिषदा में व्याख्यान नहीं बांचे, इसका आशय यही निकला कि—साधु हो अथवा साध्वी स्त्री, पुरुष दोनों की सम्मिलित सभा में व्यख्यान बांच सकते है "हीर-प्रश्नोत्तराणि" का पाठ उपर लिख चुके हैं।

२६—जो महाशय पुरुष प्रधान धर्म समझ कर साध्वियों को व्याख्यान वांचने का निषेध करते हैं, उन्हों की भूल है। क्योंकि साध्वी व्याख्यान वांचकर धर्मोपदेश से अनेक भव्य जीवों का उद्धार करे, उसमें पुरुष प्रधान धर्म को कोई हानि नहीं हो सकती। बहुत वर्षों की दीक्षा ली हुई और पढी लिखी विदुषी साध्वी भी अभी के दीक्षा लिए हुए साधु को वंदना करती है उनका बहुमान और विनय व्यवहार करती है। यह वन्दना व्यवहारादि का विषय अलग है, और भव्य जीवों को धर्मोपदेश देकर सन्मार्ग में लाना अलग विषय है। अतः पुरुष प्रधान धर्म मान्य होने पर भी साध्वी द्वारा व्याख्यान वांचकर धर्म मार्ग में प्रवृति कराना उपकार करना किसी भी प्रकार से उसमें बाधा कारक नहीं है। इसलिए निष्प्रयोजन बहाना बतलाकर साध्वी को व्याख्यान वांचने का निषेध करना उचित नहीं है।

२७—आचाराङ्ग, दशवैकालिक, कल्पसूत्र, निशीथसूत्र, और वृहत्कल्पसूत्र आदि अनेक आगमों में "**भिक्खू वा भिक्खुणि वा**" अथवा "**निग्गंथं वा निग्गंथिणं वा**" इत्यादि पाठों में साधु के समान ही साध्वियों के लिए भी पंच महाव्रत लेकर सत्रह प्रकार का संयम पालन करते हुए तथा वारह प्रकार का तप सेवन करके यावत् सर्व कर्मों का क्षय करके मोक्ष प्राप्ति का समान अधिकार बतलाया है, केवल पुरुष प्रधान धर्म होने से साधु का नाम प्रथम ग्रहण किया है पश्चात् साध्वी का नाम ग्रहण किया है

देखिये—आगमोदय समिति की तरफ से प्रकाशित बडी टीका सहित "दशवैकालिक" सूत्र चौथा अध्ययन के छपे हुए पृष्ठ १५१, १५२ में "से भिक्खू वा भिक्खुणि वा" इत्यादि पाठ की व्याख्या करते हुए श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज ने इस प्रकार लिखा है—

"**स योऽसौ महाव्रतयुक्तो, भिक्षुर्वा भिक्षुकी वा आरम्भपरित्यागाद्धर्मकायपालनाय भिक्षणशीलो भिक्षुः, एवं भिक्षुक्यपि, पुरुषोत्तमो धर्म**

[illegible] के सदुपदेश के अनुसार प्रवर्तती हैं इसमें अनेक जीवों का कल्याण है, ऐसे लाभ के [illegible] को उनके बिना [illegible] के वश होकर [illegible] के [illegible] साध्वियों को व्याख्यान बांचने का निषेध करने वाले सभी [illegible] अन्तराय बांधते हैं।

२४—श्रीहरिभद्र सूरिजी महाराज के बनाये हुए "संबोध प्रकरण" जो कि वि० सं० १९७२ एवं सन् १९१६ ई० में "जैन ग्रन्थ प्रकाशक सभा" अहमदाबाद से प्रकाशित हुआ है। उसके पृष्ठ १५ में ऐसी गाथा है—

"केवल थीणं पुरओ वक्खाणं पुरिसअग्गओ अज्जा। कुणंति जत्थ मेरा नडपेडगसंनिहा जाण ॥१॥"

इस गाथा में साफ लिख दिया है कि-साधु अकेली स्त्रियों की सभा में और साध्वी केवल पुरुषों की सभा में व्याख्यान बांचे तो उन साधु-साध्वियों की नट पेटक जैसी कुचेष्टा जानना चाहिये। इस गाथा में जब साधु को अकेली स्त्रियों की सभा में व्याख्यान बांचने का निषेध किया है तब स्त्री-पुरुष दोनों की सभा में व्याख्यान बांचने की स्पष्ट आज्ञा सिद्ध हुई। इसही तरह से साध्वियों को भी जब अकेले पुरुषों की सभा में व्याख्यान बांचने का निषेध किया तब स्त्री-पुरुष दोनों की सभामें व्याख्यान बांचने की आज्ञा सिद्ध हो ही चुकी।

श्री सागरानन्द सूरिजी (आनन्द सागरजी) ने "सुबोधिका टीका" छपवाते समय उसके प्रथम पृष्ठ में पंक्ति १०-११ में "केवलथीणं पुरओ" ऊपर की गाथा के प्रथम चरण के ये आठ अक्षर छोड़-कर इस प्रकार पाठ दिया है-"वक्खाणं पुरिस पुरिओ अज्जा, कुणंति जत्थ मेरा नडपेडगसंनिहा जाण।" ऐसी अधूरी गाथा छपवा कर साध्वियों के व्याख्यान बांचने मात्र का निषेध करने के लिए अर्थ का अनर्थ कर डाला है। यह कार्य आत्मार्थियों का नहीं है। क्योंकि पूर्वाचार्य प्रणीत ग्रन्थों का मूल पाठ उड़ा कर अर्थ का अनर्थ कर डालना सभ्यता के खिलाफ है। सूत्र ग्रन्थों का एक भी अक्षर या बिन्दु या मात्रा उड़ा देना या बदल देना अनन्त संसार का कारण माना जाता है। अपनी हठ की पुष्टि के लिए ऐसा कार्य करना उचित नहीं है सत्यान्वेषियों को पर्युषणा पर्व जैसे धार्मिक पर्व के व्याख्यान में ऐसी उन्मार्ग की प्ररूपणा कदापि नहीं करनी चाहिये।

२५—श्रीहरिभद्रसूरिजी महाराज विरचित-आगमोदय समिति की तरफ से छपी हुई "दशवैकालिक" सूत्र की बडी टीका के पृष्ठ २३७ में आठवें अध्ययन की तेपन की गाथा में धर्म कथा विधि संबंधी ऐसा पाठ है—

"नारीणां, स्त्रीणां न कथयेत्कथां, शङ्कादिदोषप्रसङ्गात्, औचित्यं विज्ञाय पुरुषाणां तु कथयेत्, अविविक्तायां नारीणामपीति।"

इस पाठ का भावार्थ ऐसा है कि साधु को स्त्रियों की सभा में धर्मकथा नहीं करनी चाहिये, केवल स्त्रियों की सभा में धर्मकथा करने पर लोगों को शङ्का का स्थान होता है और ब्रह्मचर्य हानि आदि अनेक दोषों का प्रसङ्ग प्राप्त होता है, इसलिये साधु स्त्रियों की सभा में धर्मकथा न कहे परन्तु पुरुषों की परिषदा साथ में हो तो धर्मकथा कह सकता है, यहां पर धर्मकथा कहने से धर्मदेशना समझना चाहिये. इसी पाठ का आशय लेकर "हीर प्रश्नोत्तराणि" में श्री हीरविजयसूरिजी महाराज ने खुलासा कर दिया है कि— साधु अकेली स्त्रियों की परिषदा में व्याख्यान नहीं वांचे, इसी तरह साध्वी भी केवल पुरुषों की परिषदा में व्याख्यान नहीं वांचे, इसका आशय यही निकला कि—साधु हो अथवा साध्वी स्त्री, पुरुष दोनों की सम्मिलित सभा में व्याख्यान वांच सकते है "हीर-प्रश्नोत्तराणि" का पाठ ऊपर लिख चुके हैं।

२६—जो महाशय पुरुष प्रधान धर्म समझ कर साध्वियों को व्याख्यान वांचने का निषेध करते हैं, उन्हीं की भूल है। क्योंकि साध्वी व्याख्यान वांचकर धर्मोपदेश से अनेक भव्य जीवों का उद्धार करे, उसमें पुरुष प्रधान धर्म को कोई हानि नहीं हो सकती। बहुत वर्षों की दीक्षा ली हुई और पढ़ी लिखी विदुषी साध्वी भी अभी के दीक्षा लिए हुए साधु को वंदना करती है उनका बहुमान और विनय व्यवहार करती है। यह वन्दना व्यवहारादि का विषय अलग है, और भव्य जीवों को धर्मोपदेश देकर सन्मार्ग में लाना अलग विषय है। अतः पुरुष प्रधान धर्म मान्य होने पर भी साध्वी द्वारा व्याख्यान वांचकर धर्म मार्ग में प्रवृत्ति कराना उपकार करना किसी भी प्रकार से उसमें बाधा कारक नहीं है। इसलिए निष्प्रयोजन बहाना बतलाकर साध्वी को व्याख्यान वांचने का निषेध करना उचित नहीं है।

२७—आचाराङ्ग, दशवैकालिक, कल्पसूत्र, निशीथसूत्र, और बृहत्कल्पसूत्र आदि अनेक आगमों में "भिक्खू वा भिक्खुणि वा" अथवा "निग्गंथं वा निग्गंथिणं वा" इत्यादि पाठों में साधु के समान ही साध्वियों के लिए भी पंच महाव्रत लेकर सत्रह प्रकार का संयम पालन करते हुए तथा बारह प्रकार का तप सेवन करके यावत् सर्व कर्मों का क्षय करके मोक्ष प्राप्ति का समान अधिकार बतलाया है, केवल पुरुष प्रधान धर्म होने से साधु का नाम प्रथम ग्रहण किया है पश्चात् साध्वी का नाम ग्रहण किया है।

देखिये—आगमोदय समिति की तरफ से प्रकाशित बडी टीका सहित "दशवैकालिक" सूत्र चौथा अध्ययन के छपे हुए पृष्ठ १५१, १५२ में "से भिक्खू वा भिक्खुणि वा" इत्यादि पाठ की व्याख्या करते हुए श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज ने इस प्रकार लिखा है—

"स योऽसौ महाव्रतयुक्तो, भिक्षुर्वा भिक्षुकी वा आरम्भपरित्यागाद्धर्म-कायपालनाय [illegible]

धर्म

वाणी के सद्‌बोध के वचन सुनाती है इसमें अनेक जीवों का कल्याण है, ऐसे लाभ के काम को समझे बिना पक्षपात के वश होकर अभिनिवेशिक मिथ्यात्व के हठाग्रह से साध्वियों को व्याख्यान बांचने का निषेध करने वाले बडी भारी धर्म की अंतराय बांधते हैं।

२४—श्रीहरिभद्र सूरिजी महाराज के बनाये हुए "संबोध प्रकरण" जो कि वि० सं० १९७२ एवं सन् १९१६ ई० में "जैन ग्रन्थ प्रकाशक सभा" अहमदाबाद से प्रकाशित हुआ है। उसके पृष्ठ १५ में ऐसी गाथा है—

"केवल थीणं पुरओ वक्खाणं पुरिमअग्गओ अज्जा। कुव्वंति जत्थ मेरा नडपेडगसंनिहा जाण ॥१॥"

इस गाथा में साफ लिख दिया है कि—साधु अकेली स्त्रियों की सभा में और साध्वी केवल पुरुषों की सभा में व्याख्यान बांचे तो उन साधु साध्वियों को नट पेटक जैसी कुचेष्टा जानना चाहिये। इस गाथा में जब साधु को अकेली स्त्रियों की सभा में व्याख्यान बांचने का निषेध किया है तब स्त्री पुरुष दोनों की सभा में व्याख्यान बांचने की स्पष्ट आज्ञा सिद्ध हुई। इसही तरह से साध्वियों को भी जब अकेले पुरुषों की सभा में व्याख्यान बांचने का निषेध किया तब स्त्री पुरुष दोनों की सभामें व्याख्यान बांचने की आज्ञा सिद्ध हो ही चुकी।

इस पाठ का भावार्थ ऐसा है कि साधु को स्त्रियों की सभा में धर्मकथा नहीं करनी चाहिये, केवल स्त्रियों की सभा में धर्मकथा करने पर लोगों को शङ्का का स्थान होता है और ब्रह्मचर्य हानि आदि अनेक दोषों का प्रसङ्ग प्राप्त होता है, इसलिये साधु स्त्रियों की सभा में धर्मकथा न कहे परन्तु पुरुषों की परिषदा साथ में हो तो धर्मकथा कह सकता है, यहां पर धर्मकथा कहने से धर्मदेशना समझना चाहिये, इसी पाठ का आशय लेकर "हीर प्रश्नोत्तराणि" में श्रीहीरविजयसूरिजी महाराज ने खुलासा कर दिया है कि—साधु अकेली स्त्रियों की परिषदा में व्याख्यान नहीं वांचे, इसी तरह साध्वी भी केवल पुरुषों की परिषदा में व्याख्यान नहीं वांचे, इसका आशय यही निकला कि—साधु हो अथवा साध्वी स्त्री, पुरुष दोनों की सम्मिलित सभा में व्यख्यान वांच सकते है "हीर प्रश्नोत्तराणि" का पाठ उपर लिख चुके हैं।

२६—जो महाशय पुरुष प्रधान धर्म समझ कर साध्वियों को व्याख्यान वांचने क निषेध करते हैं, उन्हों की भूल है। क्योंकि साध्वी व्याख्यान वांचकर धर्मोपदेश से अनेव भव्य जीवों का उद्धार करे, उसमें पुरुष प्रधान धर्म को कोई हानि नहीं हो सकती। बहु वर्षों की दीक्षा ली हुई और पढी लिखी विदुषी साध्वी भी अभी के दीक्षा लिए हुए सा को वंदना करती है उनका वहुमान और विनय व्यवहार करती है। यह वन्दना व्यवहारा का विषय अलग है, और भव्य जीवों को धर्मोपदेश देकर सन्मार्ग में लाना अलग विष है। अतः पुरुष प्रधान धर्म मान्य होने पर भी साध्वी द्वारा व्याख्यान वांचकर धर्म मा में प्रवृति कराना उपकार करना किसी भी प्रकार से उसमें वाधा कारक नहीं है। इसलि निष्प्रयोजन वहाना वतलाकर साध्वी को व्याख्यान वांचने का निषेध करना उचित नहीं है

२७—आचाराङ्ग, दशवैकालिक, कल्पसूत्र, निशीथसूत्र, और वृहत्कल्पसूत्र आ अनेक आगमों में "भिक्खू वा भिक्खुणि वा" अथवा "निगंथं वा निगं थिणं वा" इत्यादि पाठों में साधु के समान ही साध्वियों के लिए भी पंच महाव्रत लेक सत्रह प्रकार का संयम पालन करते हुए तथा वारह प्रकार का तप सेवन करके यावत् स कर्मों का क्षय करके मोक्ष प्राप्ति का समान अधिकार वतलाया है, केवल पुरुष प्रध धर्म होने से साधु का नाम प्रथम ग्रहण किया है पश्चात् साध्वी का नाम ग्रहण किया है

देखिये—आगमोदय समिति की तरफ से प्रकाशित वडी टीका सहित "दशवैकालिव सूत्र चौथा अध्ययन के छपे हुए पृष्ट १५१, १५२ में "से भिक्खू वा भिक्खुणि वा" इत्या पाठ की व्याख्या करते हुए श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज ने इस प्रकार लिखा है

"स योऽसौ महाव्रतयुक्तो, भिक्षुर्वा भिक्षुकी वा आरम्भपरित्यागाद्ध कायपालनाय भिक्षणशीलो भिक्षुः, एवं भिक्षुक्यपि, पुरुषोत्तमो ध

इति भिक्षुर्विशेष्यते, तद्विशेषणानि च भिक्षुकया अपि द्रष्टव्यानीति,"

इस पाठ में महाव्रत सहित साधु अथवा साध्वी आरम्भ के त्यागी अपने धर्म काय रूपी शरीर का भिक्षा वृत्ति से पालन करने वाले साधु होते हैं, वैसे ही साध्वी भी होती है। पुरुष प्रधान धर्म होने से प्रथम साधु का नाम ग्रहण करके जो विशेषण कर्तव्य साधु के लिए बतलाये गये हैं, वे ही विशेषण कर्तव्य साध्वी के लिये भी समझ लेने चाहियें। यहां पर टीकाकार ने खुलासा कथन कर दिया है कि-पुरुष प्रधान धर्म होने से प्रथम साधु का नाम लेकर पीछे साध्वी का नाम लिया है परन्तु संयम पालन का कर्तव्य सब समान रूप से इस सूत्र में कथन किया है। इसलिए पुरुष प्रधान धर्म कहने पर भी साधु की तरह साध्वी भी धर्मदेशना दे सकती है। साध्वी की धर्मदेशना से पुरुष प्रधान धर्म में कोई हानि नहीं हो सकती।

इसी प्रकार "सूयगडांग" सूत्र चौथा अध्ययन आगमोदय समिति का प्रकाशित पृष्ठ १०५ पहिली पुठी की प्रथम पंक्ति में भी ऊपर मुजब ही इसी आशय का पाठ है।

२८—देखिये फिर भी इसी सूत्र के प्रथम अध्ययन में बारह प्रकार के तप के अधिकार में अभ्यन्तर तप की व्याख्या करते हुए स्वाध्याय के वाचना, पृच्छना, परावर्तना, अनुप्रेक्षा और धर्मकथा ऐसे पांच प्रकार के भेद बतलाए हैं, जिसमें धर्मकथा का लक्षण संबंधी छपी प्रति के पृष्ट ३२ में इस प्रकार पाठ है—

"धम्मकहाणाम—जो अहिंसाइ लक्खणं सवण्णूपणीअं धम्मं अणुयोगं वा करेइ एसा धम्मकहा"

इसका भावार्थ ऐसा है कि—भव्य जीवों के आगे सर्वज्ञ भगवान् की कथन की हुई अहिंसादि लक्षण वाली धर्मकथा करना अथवा अहिंसादि लक्षण सर्वज्ञ भगवान् की कथन की हुई वाणी की व्याख्या करना यह धर्मकथा नामक स्वाध्याय का पांचवां भेद कहा जाता है।

भाव सहित बारह प्रकार के तप करने वाले साधु साध्वी आराधक होते हैं, ११ अंग आदि सूत्रों की स्वाध्याय साधु साध्वियों को हमेशा करने की आज्ञा है। स्वाध्याय का पांचवां भेद धर्मकथा है, धर्मकथा साधु-साध्वी दोनों को करने की कही है, भव्य जीवों को सूत्रों का अर्थ खुलासा धर्मदेशना देना यही धर्मकथा कही जाती है, इस न्याय से साधुओं की तरह आगमोक्त शास्त्र प्रमाणानुसार साध्वी भी श्रावक श्राविकाओं को धर्मकथा सुना सकती है, ये बात सिद्धान्तानुसार है। इसलिए साध्वियों को श्रावक-श्राविकाओं के

मगे धर्मकथा का निषेध करने वाले जिनाज्ञा का उत्थापन करने वाले ठहरते हैं।

२९—"दशवैकालिक" सूत्र का पाँचवां अध्ययन, बडी टीका सहित छपे हुए पृष्ठ १८४ में दूसरे उद्देशे की आठवीं गाथा की टीका का पाठ इस प्रकार है—

किं च "गोअरग्ग" त्ति सूत्रं, गोचराग्रप्रविष्टस्तु भिक्षार्थं प्रविष्ट इत्यर्थः न निषीदेत् नोपविशेत् क्वचिद् गृहदेवकुलादौ संयमोपघातादिप्रसङ्गात् "कथां च" धर्मकथादिरूपां न प्रबध्नीयात् प्रबन्धेन न कुर्यात्, अनेनैकव्याकरणैक-ज्ञातानुज्ञामाह, अत एवाह-स्थित्वा कालपरिग्रहेण संयत इति, अनेषणाद्वेषादिदोषप्रसंगादिति सूत्रार्थः ॥ ८ ॥

इस पाठ का भावार्थ ऐसा है कि—गौचरी गए हुए साधु-साध्वी को गृहस्थों के घरों में देवकुलादि में बैठना नहीं कल्पता है, वहाँ पर लोगों का अति परिचय होने से संयम में बाधा पहुँचती है, और वहाँ पर लोगों को सुनाने के लिए व्यवस्थासर धर्मकथा धर्म देशना न करें। कदाचित् खास कारण हो तो एक प्रश्न का उत्तर या एक गाथा का अर्थ संक्षेप से कहदें, परन्तु बैठकर विस्तार से न कहें। जिस प्रकार "बृहत् कल्प" सूत्रका पाठ ऊपर में बतलाया जाचुका है उसमें साधु-साध्वियों को धर्मकथा करने का समान अधिकार है उसी ही अभिप्रायानुसार श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज ने भी ऊपर की टीका के पाठ में साधु—साध्वियों को धर्मदेशना का समान अधिकार ही बतलाया है।

दशवैकालिक सूत्र का पहिला अध्ययन, चौथा अध्ययन, पाँचवाँ अध्ययन और आठवाँ अध्ययन की टीका के चारों पाठों के अनुसार और "संबोधप्रकरण" की गाथा जो ऊपर में बतला चुके हैं, इस प्रकार श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज ने उपरोक्त पांचो प्रमाणों के अनुसार, साधु—साध्वियों को धर्मदेशना (व्याख्यान बांचने) का समान अधिकार बतलाया है। दशवैकालिक सूत्रानुसार साधु—साध्वी दोनों को अपने संयम की आराधना करने की है संयम के साथ बारह प्रकार का तप भी सेवन किया जाता है। तप में स्वाध्याय कीजाती है और स्वाध्याय रूप तप में ही धर्मदेशना दी जाती हैं। ये अनादि सिद्ध नियम है। इस नियमानुसार साधुओं की तरह साध्वियें भी धर्मदेशना देने की अधिकारिणी सिद्ध हैं। इसलिए साध्वियों को धर्मदेशना देने का कोई भी निषेध नहीं कर सकता।

३०—फिर भी देखिये साधु—साध्वियों को पांच समितियों का पालन करने की भगवान की आज्ञा है। उसमें दूसरी भाषा समिति अर्थात्—उपयोग पूर्वक अपनी आत्मा को

के आराधक होते हैं। यह बात शास्त्रानुसार सर्वमान्य प्रत्यक्ष सत्य है। इस ही के अनुसार साध्वी भी भव्यजीवों के आगे उनके हितकारी उपकार करने वाली शुद्ध भाषा समिति सहित सूत्रार्थ का व्याख्यान सुनावें तो वह साध्वी भगवान् की आज्ञा की आराधक ठहरती है। जिसपर भी जो महाशय साध्वी को धर्मोपदेश देने की मनाई करते हैं, वे लोग प्रत्यक्ष ही शास्त्रों की बातों का उत्थापन करने वाले ठहरते हैं।

३१—साध्वियों को केवलज्ञान प्राप्त करके मोक्ष में जाने वाली मानते हैं तब क्या साध्वी का व्याख्यान मोक्ष से भी अधिक महत्व का है? कि-जिसका निषेध करते हैं। यहाँ निषेध करने वालों की बुद्धि पर हमें दया आती है कि—वे साध्वियों को अनन्त ज्ञानी और मोक्ष प्राप्ति करने वाली मानकर भी उनको भव्यजीवों के आगे उपदेश देने का निषेध करते हैं। पुरुष प्रधान धर्म मानकर भी साध्वियों का व्याख्यान बांचने का अनादि सिद्ध अधिकार है। उसको निषेध करना किसी प्रकार भी उचित नहीं है।

३२—जैन शासन में पुरुष प्रधान धर्म होने से शास्त्रों में जगह जगह पर साधु के नाम से जो जो क्रिया की बातें बताई हैं उसके अनुसार साध्वियों के लिए भी यथायोग्य वेही क्रिया की बातें समझ लेनी चाहिये। जैसे—श्रमणसूत्र में "चउहिं विकहाहिं इत्थिकहाए, भत्तकहाए, देसकहाए, रायकहाए" इस पाठ में साधु के लिए स्त्रीकथा का निषेध किया है और वेही पाठसाध्वियाँ भी बोलतीं हैं तब "इत्थि कहाए" के स्थान में पुरुषकथा न करने का अर्थ लिया जाता है, इसी प्रकार श्रावक के "वन्दित्ता" सूत्र में भी "चउत्थे अणुव्वयंमि निच्चं परदारगमणविरईओ" इस पाठ में श्रावक के चौथे अनुव्रत में हमेशा परस्त्री का त्याग बताया है, और वेही पाठ श्राविकायें भी बोलती हैं, उनके लिए चौथे अनुव्रत में हमेशा पर पुरुष के त्याग करने का अर्थ समझ लिया जाता है, इसही प्रकार जहाँ जहाँ साधु श्रावक के लिए जो जो अधिकार आये हों वहाँ वहाँ साध्वी तथा श्राविका के लिए भी यथा योग्य समझ लिये जाते हैं, इस न्यायानुसार जिस शास्त्र में साधु के लिए धर्मोपदेश देने का विधान आया हो उसके अनुसार ही साध्वी के लिए भी धर्मोपदेश देने के लिए उन्हीं प्रमाणों को उसी अधिकार का समझ लेना चाहिए।

३३—फिर भी [illegible] अल्प [illegible] लोगों ने जब कई तरह के नियम बनाकर [illegible] के [illegible] अधिकार छीन लिए थे और उनको अपने पीछे [illegible] कर दिया था तब उस [illegible] का नाश करके [illegible] को [illegible], [illegible] आदि [illegible] करना और [illegible] पालन करने [illegible] अधिकार [illegible] है। [illegible] और [illegible] के [illegible]

वीतराग के जैन शासन में साध्वी समाज को धर्मोपदेश देकर दूसरों के कल्याण करने का साधुओं के समान ही अधिकार है, जिस पर भी अभी कई अनसमझ लोगों को यह बात समझ में नहीं आई है, उन्होंको ऊपर में जो जो शास्त्रों के प्रमाण हमनें बतलाये हैं, उन्हों पर दीर्घ दृष्टि से विचार करके अपनी भूल सुधारना और सत्य बात ग्रहण करना उचित है ग्यारह अंग मूल सूत्रों का पढ़ना, उसका अर्थ सीखना, उस मुजब अपना आत्मकल्याण करना यह तो लाभ का हेतु कहना और उन्हीं सूत्रार्थ को दूसरे भव्यजीव—श्रावक आदि को सुना कर उन्होंको अपनी आत्मा के कल्याण का मार्ग बतलाना, इसमें अलाभ पाप दोष बतलाना यह कैसा भारी अन्याय है इसका विचार सज्जन पाठक अपने आपही कर लेवें।

३४—जो महाशय ऐसा कहते हैं कि "याकिनी महत्तरा" साध्वी ने हरिभद्र भट्ट को "चक्कीदुग्गं" इत्यादि एक गाथा का अर्थ न बतलाया तो फिर साध्वी सभा में व्याख्यान करके सूत्रों का अर्थ कैसे बतला सकती है। ऐसी शंका भी अनुचित है। क्यों-कि—वह साध्वी अकेली थी और शाम का समय था। हरिभद्र भट्ट ने रास्ते चलते यह पूछा था, वह भी अकेला था और अन्य मतावलम्बी था और अपरिचित भी था उसके साथ अकेली साध्वी को शास्त्रीय वार्तालाप करना उचित नहीं था, अतः उस साध्वी ने हरिभद्र भट्ट को एक गाथा का अर्थ न बतलाया, परन्तु गुरू महाराज के पास में जाकर समझ लेने का कहा, किन्तु अभी साध्वी व्याख्यान वांचेगी वह तो समुदाय में वांचेगी, इसलिए अप्रासंगिक अकेले व अन्य मतवाले हरिभद्र भट्ट का दृष्टान्त बतलाकर हजारों श्रावक-श्राविकाओं के धर्म श्रवण में अन्तराय डालना उचित नहीं है।

जिस जगह आचार्य, उपाध्याय और अपने गुरु आदि बड़े पुरुष विराजमान हों और वहां पर सामान्य साधु गौचरी आदि के लिए गया हो वहां उसे कोई श्रावक-श्राविकादि प्रश्न पूछे तो अपने बड़े पुरुषों के पास जाकर समाधान करने के लिये कह देवे, किन्तु आप वहां अपनी पंडिताई बतलाने के लिए प्रश्न का उत्तर न देवे, इस प्रकार बड़े पुरुषों की विनय भक्ति बहुमान की मर्यादा है इसी प्रकार से याकिनी साध्वी ने हरिभद्र भट्ट को एक गाथा का अर्थ न बतलाकर अपने आचार्य महाराज के पास जाकर समझने का कह दिया, यह उसकी अपने पूज्य पुरुषों के प्रति विनय भक्ति और बहुमान की मर्यादा व बुद्धिमत्ता थी। इस बातका भावार्थ न समझ कर साध्वियों को श्रावक-श्राविकाओं की सभामें व्याख्यान वांचने का निषेध समझ रक्खा है, यह उनकी बड़ी भूल है।

हरिभद्रभट्ट ही दीक्षा लेकर श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज हुए हैं उन्होंने अपने बनाये "संबोध प्रकरण" में तथा "दशवैकालिक" सूत्र की बड़ी टीका में साधु के समान

के आराधक होते हैं। यह बात शास्त्रानुसार सर्वमान्य प्रत्यक्ष सत्य है। इस ही के अनुसार साध्वी भी भव्यजीवों के आगे उनके हितकारी उपकार करने वाली शुद्ध भाषा समिति सहित सूत्रार्थ का व्याख्यान सुनावें तो वह साध्वी भगवान् की आज्ञा की आराधक ठहरती है। जिसपर भी जो महाशय साध्वी को धर्मोपदेश देने की मनाई करते हैं, वे लोग प्रत्यक्ष ही शास्त्रों की बातों का उत्थापन करने वाले ठहरते हैं।

३१—साध्वियों को केवलज्ञान प्राप्त करके मोक्ष में जाने वाली मानते हैं तब क्या साध्वी का व्याख्यान मोक्ष से भी अधिक महत्व का है? कि-जिसका निषेध करते हैं। यहाँ निषेध करने वालों की बुद्धि पर हमें दया आती है कि—वे साध्वियों को अनन्त ज्ञानी और मोक्ष प्राप्ति करने वाली मानकर भी उनको भव्यजीवों के आगे उपदेश देने का निषेध करते हैं। पुरुष प्रधान धर्म मानकर भी साध्वियों का व्याख्यान बांचने का अनादि सिद्ध अधिकार है। उसको निषेध करना किसी प्रकार भी उचित नहीं है।

३२—जैन शासन में पुरुष प्रधान धर्म होने से शास्त्रों में जगह जगह पर साधु के नाम से जो जो क्रिया की बातें बताई हैं उसके अनुसार साध्वियों के लिए भी यथायोग्य वेही क्रिया की बातें समझ लेनी चाहिये। जैसे—श्रमणसूत्र में "चउहिं विकहाहिं इत्थिकहाए, भत्तकहाए, देसकहाए, रायकहाए" इस पाठ में साधु के लिए स्त्रीकथा का निषेध किया है और येही पाठसाध्वियाँ भी बोलतीं हैं तब "इत्थि कहाए" के स्थान में पुरुषकथा न करने का अर्थ लिया जाता है, इसी प्रकार श्रावक के "वन्दित्ता" सूत्र में भी "चउत्थे अणुव्वयंमि निच्चं परदारगमणविरईओ" इस पाठ में श्रावक के चौथे अनुव्रत में हमेशा परस्त्री का त्याग बताया है, और येही पाठ श्राविकायें भी बोलती हैं, उनके लिए चौथे अनुव्रत में हमेशा पर पुरुष के त्याग करने का अर्थ समझ लिया जाता है, इसही प्रकार जहाँ जहाँ साधु श्रावक के लिए जो जो अधिकार आये हों वहाँ वहाँ साध्वी तथा श्राविका के लिए भी यथा योग्य समझ लिये जाते हैं, इस न्यायानुसार जिस शास्त्र में साधु के लिए धर्मदेशना देने का विधान आया हो उसके अनुसार ही साध्वी के लिए भी धर्मदेशना देने के लिए उन्हीं प्रमाणों को उसी अधिकार का समझ लेना चाहिए।

३३—फिर भी देखिये-अन्य दर्शनीय लोगों ने जब कई तरह के नियम बनाकर वेद पढ़ने आदि के स्त्रियों के स्वाभाविक अधिकार छीन लिए थे और उन्हों को अपने नीचे दबा रक्खा था, कई बातों में सर्वथा परवश बना दिया था तब उस परवशता का नाश करके श्री महावीर भगवान् ने स्त्रियों को पंच महाव्रत-संयम लेना, अग्यारह अंग आदि मूल आगमों को पढ़ना, स्वाध्याय करना और अपना संयम पालन करते हुए यावत् मोक्ष पहुँचने तक का पुरुषों के समान अधिकार बतलाया है। ऐसे उदार और न्याय संपन्न मनोह—

वीतराग के जैन शासन में साध्वी समाज को धर्मोपदेश देकर दूसरों के कल्याण करने का साधुओं के समान ही अधिकार है, जिस पर भी अभी कई अनसमझ लोगों को यह बात समझ में नहीं आई है, उन्होंको ऊपर में जो जो शास्त्रों के प्रमाण हमने बतलाये हैं, उन्हों पर दीर्घ दृष्टि से विचार करके अपनी भूल सुधारना और सत्य बात ग्रहण करना उचित है। ग्यारह अंग मूल सूत्रों का पढ़ना, उसका अर्थ सीखना, उस मुजब अपना आत्मकल्याण करना यह तो लाभ का हेतु कहना और उन्हीं सूत्रार्थ को दूसरे भव्यजीव—श्रावक आदि को सुना कर उन्होंको अपनी आत्मा के कल्याण का मार्ग बतलाना, इसमें अलाभ पाप दोष बतलाना यह कैसा भारी अन्याय है इसका विचार सज्जन पाठक अपने आपही कर लेवें।

३४—जो महाशय ऐसा कहते हैं कि "याकिनी महत्तरा" साध्वी ने हरिभद्र भट्ट को "चक्किदुग्गं" इत्यादि एक गाथा का अर्थ न बतलाया तो फिर साध्वी सभा में व्याख्यान करके सूत्रों का अर्थ कैसे बतला सकती है। ऐसी शंका भी अनुचित है। क्योंकि—वह साध्वी अकेली थी और शाम का समय था। हरिभद्र भट्ट ने रास्ते चलते यह पूछा था, वह भी अकेला था और अन्य मतावलम्बी था और अपरिचित भी था उसके साथ अकेली साध्वी को शास्त्रीय वार्तालाप करना उचित नहीं था, अतः उस साध्वी ने हरिभद्र भट्ट को एक गाथा का अर्थ न बतलाया, परन्तु गुरू महाराज के पास में जाकर समझ लेने का कहा, किन्तु अभी साध्वी व्याख्यान वांचेगी वह तो समुदाय में वांचेगी, इसलिए अप्रासंगिक अकेले व अन्य मतवाले हरिभद्र भट्ट का दृष्टान्त बतलाकर हजारों श्रावक-श्राविकाओं के धर्म श्रवण में अन्तराय डालना उचित नहीं है।

जिस जगह आचार्य, उपाध्याय और अपने गुरु आदि वड़े पुरुष विराजमान हों और वहां पर सामान्य साधु गौचरी आदि के लिए गया हो वहां उसे कोई श्रावक-श्राविकादि प्रश्न पूछे तो अपने वडे पुरुषों के पास जाकर समाधान करने के लिये कह देवे, किन्तु आप वहां अपनी पंडिताई बतलाने के लिए प्रश्न का उत्तर न देवे, इस प्रकार वडे पुरुषों की विनय भक्ति बहुमान की मर्यादा है इसी प्रकार से याकिनी साध्वी ने हरिभद्र भट्ट को एक गाथा का अर्थ न बतलाकर अपने आचार्य महाराज के पास जाकर समझने का कह दिया, यह उसकी अपने पूज्य पुरुषों के प्रति विनय भक्ति और बहुमान की मर्यादा व बुद्धिमत्ता थी। इस बातका भावार्थ न समझ कर साध्वियों को श्रावक-श्राविकाओं की सभामें व्याख्यान वांचने का निषेध समझ रक्खा है, यह उनकी वडी भूल है।

हरिभद्रभट्ट ही दीक्षा लेकर श्री हरिभद्रसूरिजी महाराज हुए हैं उन्होंने अपने बनाये "संबोध प्रकरण" में तथा "दशवैकालिक" सूत्र की वडी टीका में साधु के समान

पहेलुं दुःख सघले दीसे, पाछे सुख संभव हीसे।
इम जाणीने विश्वा वीसे, मन नाखे शोक मां कीसे ॥ १६ ॥
भेट्या नहि चरण पिताना, मत कर इमपरि चिंताना।
पहेली पर हवणा दाना, तुज भक्तिना गुण नहि छाना ॥ १७ ॥
शोक मूकीने हवे भूप, संसारनो भावी सरूप।
दृढधारी विवेक अनूप. तज दूरे सहु भवकूप ॥ १८ ॥
दुखसागर ए संसार, संगम सुपना अनुकार।
लखमी जिम बीज संचार, जीवि बुद-बुदे अणुहार ॥ १९ ॥
तुज सरिखा जे इम करिशे, शोकाकुले हियडुँ भरशे।
बापडलो किंहा संचरशे, धीरज धानक विण फिरशे ॥ २० ॥
इम धर्मतणो उपदेश, निसुणी प्रतिबुध्यो नरेश।
छंडे सविशोक कलेशा, संवेग लह्यो सुविशेष ॥ २१ ॥
प्रणमे नित्य-नित्य भूपाल, महत्तारिका चरण त्रिकाल।
सड्त्रीसमी ए कही ढाल, चोथे खंडे "कान्ति" रसाल ॥ २२ ॥

दोहाः—

महत्तारिकाना मुखथकी सुणे धर्म उपदेश।
करे महोन्नति धर्मनी, धर्म धुरीण नरेश ॥

देखिये ऊपर दिये हुए चरित्र के पाठ से विदित होता है कि—मलयसुंदरी साध्व
र्मिल चारित्र पालन करती हुई, ग्यारह अंगों की पढ़ने वाली तत्वज्ञा, प्रतिबोध देने
रायण, बहुत कठिन तप करके कर्मक्षय करने में सावधान होने से अवधिज्ञान पाया था
तससे लोगों के संशय रूपी अंधकार को नाश करने में सूर्य समान प्रभाववाली हुई थी
ौर अन्य मिथ्यात्वियों का मान उतारनेवाली तथा भव्य जीव रूपी कमलों को प्रतिबो
रनेवाली थी। उस साध्वी ने राजा को बहुत विस्तार से धर्मोपदेश देकर प्रतिबोध दिय
ा। इससे राजा हमेशा उस साध्वी के चरण कमलों को वन्दना करता था और जै
ासन की उन्नति करने वाला धर्मोपदेश हमेशा सुनता था। इसका विशेप विवरण रा
नानेवाले श्रीकान्तिविजयजी महाराज ने भाषाबद्ध रचना में खुलासारूप से लिख दिय
ै जिससे यहां पर फिर अधिकरूप से लिखने की आवश्यकता नहीं समझी गई है।

संदेह भविकना टाले, कुमतादिकना मदगाले।
एक अवसर अवभे भाले, महाबल निर्वाण निहाले ॥ होराज ॥ ३ ॥
निज नंदन प्रतिबोधेवा, भवताप दुरंत हरेवा।
आवी तिण पुरी ततखेवा, होवे साधु ने धर्मनी टेवा ॥ होराज ॥ ४ ॥
साधुयोग्य वसतीने ठामें, पशु पंडग रहित सुधामें।
साध्वी ने ठाण अभिरामे, बिटी रही आई सुकामे ॥ होराज ॥ ५ ॥
शतबल भूपत अति भक्ते, वांदे श्रावकनी युक्ते।
समजावा साध्वी युगते, जिण थी पामे वली मुक्ते ॥ होराज ॥ ६ ॥
राजेन्द्र पिता तुज शूरो, उपशम संवेगे पूरो।
सत्य साहस शौच सनूरो, पाम्यो शिवसुख सह भूरो ॥ होराज ॥ ७ ॥
उपसर्गो कनकवतीये, न करयुं मन कलुष व्रतीये।
भवसागर तरतां तीये, अवलंबन दीधुं सीये ॥ होराज ॥ ८ ॥
धन पुत्र कलत्र गृहभार, जस कारण तजिये संसार।
नय लोच क्रिया व्यवहार, साधीजे विविध प्रकार ॥ होराज ॥ ९ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ होराज ॥ १० ॥
[illegible]
[illegible] ॥ होराज ॥ ११ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ होराज ॥ १२ ॥
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible]

पहेलुं दुःख सघले दीसे, पाछे सुख संभव हीसे।
इम जाणीने विश्वा वीसे, मन नाखे शोक मां कीसे ॥ १६ ॥
भेट्या नहि चरण पिताना, मत कर इंमपरि चिंताना।
पहेली पर ह्वणा दाना, तुज भक्तिना गुण नहि छाना ॥ १७ ॥
शोक मूकीने हवे भूप, संसारनो भावी सरूप।
हृढ़धारी विवेक अनूप, तज दूरे सहु भवकूप ॥ १८ ॥
दुखसागर ए संसार, संगम सुपना अनुकार।
लखमी जिम वीज संचार, जीवि बुद-बुदे अणुहार ॥ १९ ॥
तुज सरिखा जे इम करिशे, शोकाकुले हियडुँ भरशे।
धापडलो किहा संचरशे, धीरज धानक विण फिरशे ॥ २० ॥
इम धर्मतणो उपदेश, निसुणी प्रतिबुध्यो नरेश।
छंडे सविशोक कलेशा, संवेग लह्यो सुविशेष ॥ २१ ॥
प्रणमे नित्य-नित्य भूपाल, महत्तारिका चरण त्रिकाल।
सड़त्रीसमी ए कही ढाल, चोथे खंडे "कान्ति" रसाल ॥ २२ ॥

दोहाः—

महत्तारिकाना मुखथकी सुणे धर्म उपदेश।
करे महोन्नति धर्मनी, धर्म धुरीण नरेश ॥

देखिये ऊपर दिये हुए चरित्र के पाठ से विदित होता है कि—मलयसुंदरी साध्वी निर्मल चारित्र पालन करती हुई, ग्यारह अंगों की पढ़ने वाली तत्वज्ञा, प्रतिबोध देने में परायण, बहुत कठिन तप करके कर्मक्षय करने में सावधान होने से अवधिज्ञान पाया था। जिससे लोगों के संशय रूपी अंधकार को नाश करने में सूर्य समान प्रभाववाली हुई थी। और अन्य मिथ्यात्वियों का मान उतारनेवाली तथा भव्य जीव रूपी कमलों को प्रतिबोध करनेवाली थी। उस साध्वी ने राजा को बहुत विस्तार से धर्मोपदेश देकर प्रतिबोध दिया था। इससे राजा हमेशा उस साध्वी के चरण कमलों को वन्दना करता था और जैन शासन की उन्नति करने वाला धर्मोपदेश हमेशा सुनता था। इसका विशेष विवरण रास बनानेवाले श्रीकान्तिविजयजी महाराज ने भाषाबद्ध रचना में खुलासारूप से लिख दिया है जिससे यहां पर फिर अधिकरूप से लिखने की आवश्यकता नहीं समझी गई है।

पहेलुं दुःख सघले दीसे, पाछे सुख संभव हीसे।
इम जाणीने विश्वा वीसे, मन नाखे शोक मां कीसे ॥ १६
भेट्या नहि चरण पिताना, मत कर इंमपरि चिंताना।
पहेली पर हवणा दाना, तुज भक्तिना गुण नहि छाना ॥ १७ ॥
शोक मूकीने हवे भूप, संसारनो भावी सरूप।
दृढधारी विवेक अनूप. तज दूरे सहु भवकूप ॥ १८ ॥
दुखसागर ए संसार, संगम सुपना अनुकार।
लखमी जिम वीज संचार, जीवि बुद-बुदे अणुहार ॥ १९ ॥
तुज सरिखा जे इम करिशे, शोकाकुले हियडुँ भरशे।
घापडलो किहा संचरशे, धीरज धानक विण फिरशे ॥ २० ॥
इम धर्मतणो उपदेश, निसुणी प्रतिवुध्यो नरेश।
छंडे सविशोक कलेशा, संवेग लह्यो सुविशेष ॥ २१ ॥
प्रणमे नित्य-नित्य भूपाल, महत्तरिका चरण त्रिकाल।
सड्त्रीसमी ए कही ढाल, चोथे खंडे "कान्ति" रसाल ॥ २२ ॥

दोहाः—

महत्तारिकाना मुखथकी सुणे धर्म उपदेश।
करे महोन्नति धर्मनी, धर्म धुरीण नरेश ॥

देखिये ऊपर दिये हुए चरित्र के पाठ से विदित होता है कि—मलयसुंदरी साध्वी निर्मल चारित्र पालन करती हुई, ग्यारह अंगों की पढ़ने वाली तत्वज्ञा, प्रतिवोध देने में परायण, वहुत कठिन तप करके कर्मक्षय करने में सावधान होने से अवधिज्ञान पाया था। जिससे लोगों के संशय रूपी अंधकार को नाश करने में सूर्य समान प्रभाववाली हुई थी और अन्य मिथ्यात्वियों का मान उतारनेवाली तथा भव्य जीव रूपी कमलों को प्रतिबोध करनेवाली थी। उस साध्वी ने राजा को वहुत विस्तार से धर्मोपदेश देकर ... था। इससे राजा हमेशा उस साध्वी के चरण कमलों को वन्दना करता

३७—ऊपर चरित्र के पाठ में "तत्वज्ञा" "प्रतिबोध परायणा" "सत्सन्देहतमासीह जयान्यर्कप्रभेव सा" "चित्रस्त कुनयोलूका भव्याम्भोजप्रबोधिका" इत्यादि तथा रास के पाठ में श्रुतधर्म पडिबोहे होराज ॥१॥ "सन्देह भविकना टाले" कुमतादिकना मद गाले। इत्यादि वाक्यों से चरित्रकारने एवं रास रचयिता ने मलयसुंदरी साध्वी को अन्य भव्यजीवों को भी धर्मदेशना देनेवाली ठहराई है।

३८—इस प्रकार प्रसंगवश प्रत्येक अवसर पर साध्वियों ने पुरुषों को और स्त्रियों को अनेकवार धर्मोपदेश दिया है। जिसका "ज्ञाताजी" "उतराध्ययन" "निरयावली" आदि अनेक सूत्र तथा चरित्र प्रकरण आदि में बहुत शास्त्रीय प्रमाण स्थान स्थान पर मिलते हैं। जिस पर भी ज्ञानसुंदरजी आदि कई महाशय कहा करते हैं कि–साध्वी के व्याख्यान बाँचने की कुप्रथा करीब पचास–साठ वर्षों से नवीन प्रचलित हुई है। किसी भी शास्त्र में साध्वी को व्याख्यान बाँचने की आज्ञा नहीं है साध्वी अगर व्याख्यान बाँचे तो तीर्थंकर गणधर पूर्वाचार्य व शास्त्रों की मर्यादा भंग करने की अपराधिनी ठहरती है और उनका व्याख्यान सुननेवाले श्रावक भी दोषी ठहरते हैं। इत्यादि अनेक तरह की मिथ्या बातें बनाकर भोले जीवों को उन्मार्ग में डालते हैं। हम ऊपर बृहत्कल्प सिद्ध प्राभृत व नन्दीसूत्रटीका आदि के शास्त्रीय प्रमाण बतला चुके हैं। उन सब प्रमाणों से साध्वियों को व्याख्यान बाँचने की आज्ञा अनादिसिद्ध साबित है।

३९—कई महाशय साध्वी को व्याख्यान बांचने का निषेध करने के लिए "जीवानुशासन" ग्रन्थ का यह प्रमाण बतलाते हैं कि—

मुद्ध जणछेत्तसुहबोहसस्सविद्दवणदक्खसमणीओ ईईओ वियकाओ वि अडंतिधम्मं कहं तीओ ॥ १८१ ॥

व्याख्य।–मुग्धजना: स्वल्पबुद्धिलोका: त एव क्षेत्राणि बीज वपन-भूमयस्तेषु शुभबोध: प्रधानाशय: स एव सस्यं धान्यं तस्य विद्रवणं विनाश करणं तत्र दक्षा: पट्व्य: प्राकृतत्वाचात्र विभक्तिलोप: श्रमण्य: आर्यिका ईतय इव तिड्डाद्या काश्चन न सर्वा अटन्ति ग्रामादिषु चरन्ति धर्म्मं दानादिकं कथयन्त्यो ब्रुवाणा इति गाथार्थ:। एतदपि निराकर्तुमाह

एगंतेणं चिय तं न सुंदरं जेण नाणंपि पडिसेही।
सिद्धं तदेसणाए कप्पट्ठिय एय गाहाए ॥ १८२ ॥

व्याख्या–एकान्ते नैव सर्वथा तद्धर्मकथनं न नैव सुन्दरं भव्यम्,

तासां साध्वीनां प्रतिषेधो निराकरणं सिद्धान्त देशनाया आगम कथ
। कथा प्रतिषेधः ? कल्पस्थितयैव गाथयेत्यर्थः कल्पगाथा मेवाह

कुसमय सुईण महणो विवोहओ भविय पुंडरीयाणं ।
धम्मो जिणपन्नतो पकप्पजइणा कहेयव्वो ॥ १८३ ॥

व्याख्या—कुसमय श्रुतीनां कुसिद्धान्तमतीनां मथनो विनाशकः
वेबोधको विकाशको भव्यपुण्डरीकाणां मुक्तियोग्यप्राणिशतं पेत्राणां
र्म्मो दानादिको जिनप्रज्ञप्तो मुनीन्द्रगादितः कल्पयतिना निशीथज्ञ
ाधुना कथयितव्यो न पुनः साध्व्येतिहृदयमिति गाथार्थः ननु यदि तासां
ादीयते, ततोनिन्द्यंतद्धर्म्म कथनमित्याह—

संपइ पुणो न दिज्जइ पकप्पगंथस्स ताण सुत्तत्थो ।
जइया विय दिज्जंतो तइया विय एस पडिसेहो ॥१८४॥

व्याख्या—साम्प्रतमधुना पुनः नैव दीयते वितीर्यते प्रकल्प ग्रन्थस्य
नेशीथस्यतासां आर्यिकाणां सूत्रार्थः सूत्रेण पद्धत्या सहितोऽर्थोऽभिधेयः
[ूत्रार्थ उभयमिति हृदयम् यदापि वा दीयते वितीर्यतेस्म, तदापि च
स्मिन्नपिकाले एप व्याख्यान करण लक्षणः प्रतिपेधो निवारणमितिगाथार्थः
ामुमेवार्थं दृष्टान्तपूर्वकं दर्शयन्नाह—

हरिभद्दधम्म जणणीए किंच जाइणि पवत्तिणीए वि ।

वहु मन्नसु मा चरियं अमुणियतत्ताण ताण ता जीव।
जइ सं निवारियाओ ता वारसु महुरवक्केण ॥ १८६ ॥

व्याख्या–वहु मन्यस्व भव्यामिदमितिमंस्थाः, मा इति निषेधे, चरितं धर्मकथन लक्षणम्, अमुणि त तत्त्वानाम् अविदित परमार्थानाम् तासां आर्यिकाणाम् तस्माज्जीव । आत्मन् ! यदि विकल्पार्थः, तिष्ठन्ति सं निवारिताः निषिद्धाः ततो वारय निषेधय, मधुर वाक्येन—कोमल वचसेति गाथार्थः।

इसका भावार्थ ऐसा है कि–अल्पबुद्धिवाले भोले जीव रूपी क्षेत्रों में शुभ बोध रूपी श्रेष्ठ धान्य को नाश करने वाली टिड्डादि ईति समान कई एक साध्वियाँ परन्तु यहाँ पर सर्व साध्वियों का ग्रहण नहीं करना, वे साध्वियें ग्रामादि में विचरती हैं और दानादि धर्म कथा कहती फिरती हैं।

साध्वियों को धर्म देशना का कथन करना एकान्त से सर्वथा अच्छा नहीं है। आगमें का सुन्दर कथन करना अर्थात् शास्त्रों की देशना देना (तासां) अर्थात् उन चैत्य वासिन साध्वियों के लिए निषेध किया है।

कुशास्त्रों की मति को विनाश करनेवाला तथा मुक्तिजाने योग्य भव्य जीव रू पुण्डरीककमलों को विकाश करनेवाला जिनेन्द्र कथित दानादि धर्म निशीथ सूत्रको जान वाले साधु को ही कहना योग्य है, किन्तु साध्वियों को नहीं वर्तमान काल में उ साध्वियों को प्रकल्प ग्रन्थ का अर्थात् निशीथ सूत्र और उसका अर्थ नहीं दिया जाता पहले के काल में दिया जाता था तब भी उसका व्याख्यान करने का निषेध था, इस विषय में दृष्टान्त कहते हैं हरिभद्रसूरिजी को उनकी माता याकिनी महत्तरासाध्वी "चक्कीदुग्गं हरिपणगं" इत्यादि एक गाथा का अर्थ नहीं बताया तो फिर अधिक बता की बात ही क्या है।

इसी प्रकार तत्व को नहीं जानने वाली जो साध्वियाँ धर्मकथा की देशना देती हैं उनको मधुर वाणी से निषेध करना यह जीवानुशासन के पाठ का सारांश है।

अब यहाँ पर ऊपर के पाठ की समीक्षा करते हैं। जीवानुशासन में साध्वियों के ग्रामादि में विहार करना तथा दानादि का धर्मोपदेश देना ये दोनों बातें भव्यजीवों को नुकसान करनेवाली होने से इनका निषेध किया है। इसका भावार्थ समझे बिना साध्वियों को धर्मोपदेश देने का निषेध करने वालों की बड़ी भूल है, क्योंकि यह अधिकार उस समय की चैत्यवासिनी भ्रष्टाचारी साध्वियों के लिए ग्रन्थकार ने कहा है इस ग्रन्थ में

त्यवासियों की शास्त्र विरुद्ध बहुतसी बातों की आचरणाओं का निषेध किया है। उसके साथ साथ उन चैत्यवासिनी साध्वियों को ग्रामादि में विहार करना तथा उपदेश देना दोनों ही बातों का निषेध किया है, उसके साथ यह भी बतलाया है कि "अडंतिधम्मंकहंतिओ" तथा "आर्यिका इतर इव तिङ्गायाः काश्चन न सर्वा" यह वाक्य ऊपर के मूल पाठ में तथा टीका के पाठ में खुलासा लिखा हुआ है, इससे ग्रन्थकार ने यह विषय उन वेशधारिणीयों के लिए कहा है, परन्तु सर्व संयमी साध्वियों के लिए नहीं जिस पर भी ग्रन्थकार के अभिप्राय विरुद्ध होकर के यह विषय सर्व साध्वियों के लिए ठहरानेवाले मायाचार से अभिनिवेशिक मिथ्यात्व का सेवन करते हैं।

४०—और भी देखिये—जिस तरह किसी ग्राम-नगर या प्रान्त में भ्रष्टाचारी साधु-साध्वियों का समुदाय रहता हो और उनके लोक विरुद्ध धर्म विरुद्ध व्यवहार के देखने से जैन शासन की अवहिलना होती हो, तब उसका सुधार करने के लिए यदि कोई सुधारक कहे कि—साधु-साध्वियों का अहार-पानी देना, वन्दना करना, और उन्हों का व्याख्यान सुनना इत्यादि कार्य पाप वृद्धि का हेतु है, इसलिए ऐसा नहीं करना चाहिए। ऐसा कहने वालों का आशय उन साधु—साध्वियों का भ्रष्टाचार रोकने का होता है, परन्तु वे वाक्य शुद्ध संयमी सर्व साध्वियों के लिए नहीं माने जा सकते। इसही तरह से जीवानुशासन ग्रन्थ-कर्ता ने भी चैत्यवासिनी साध्वियों का विहार और उपदेश दोनों निषेध किया है, जिस पर भी इस प्रमाण को आगे करके सर्व शुद्ध संयमी साध्वियों को विहार करने का तथा उपदेश देने का निषेध करनेवालों की बडी अज्ञानता है।

४१—फिर भी देखिये—ऊपर के प्रमाण से यदि सर्व साध्वियों को व्याख्यान वांचने का निषेध किया जावे तो यह बात जिनेश्वर भगवान की आज्ञा के सर्वथा विरुद्ध ठहरती है, क्योंकि "उत्तराध्ययन, नन्दी, सूयगडांग, ज्ञाताजी, निरयावली" आदि आगमों की टीका तथा प्रकरण और चरित्रादि अनेक शास्त्रों के पाठ ऊपर में बतलाकर हम साध्वी को व्याख्यान वांचने का अधिकार साबित कर आये हैं, यह नियम अनादिकाल से है, इसही से तो साध्वियों से प्रतिबोध पाये हुए पुरुष चारित्र लेकर यावत् सिद्ध होते हैं, इसलिए जीवानुशासन के नाम से सर्व साध्वियों को व्याख्यान वांचने का निषेध करनेवाले जिनाज्ञा के विराधक बनकर उत्सूत्र प्ररूपक ठहरते हैं।

४२—अगर निशीथसूत्रको जाननेवालेकोही व्याख्यान वांचनेका अधिकारी मानकर और साध्वियोंको व्याख्यान वांचनेका सर्वथा निषेध कियाजावे तो यह भी बहुत अनुचित है, क्योंकि देखो-जैनशासन स्याद्वाद अनेकान्त है, उसमें एकान्त हठही नहीं हो सकता, देखिये-गोचरी जाना, व्याख्यान देना, इत्यादि अनेक बातों को मुख्य वृत्तिसे गीतार्थों के लिए आज्ञा है, परन्तु इससे इनबातोंका अन्य सर्व साधुओंके लिए निषेध नहीं बन सकता अभीये बातें सामान्य साधु

स गाथा की टीका में खुलासा कथन कर दिया है, कि अभी उन साध्वियों को निशीथसूत्र
र्थ सहित नहीं पढाया जाता किन्तु पहले पढाया जाता था और उस समय गुजरात आदि
शों में प्रायः चैत्यवासिनी वेशधारिणी साध्वियाँ थी और उन्हीं का अधिकतर संयम धर्म
रा हुआ था ऐसी दशा में उस समय की उन साध्वियों को निशीथसूत्र आदि पढने की
नाई की गई तथा ग्रामानुग्राम विहार करने की और धर्मदेशना देने की मनाई की गई
ो उन्हीं के कर्तव्यों के अनुसार उचित ही था। इस बात का भावार्थ समझे विना शुद्ध
यमी साध्वियों को निशीथसूत्र पढने की तथा ग्रामादि में विहार करने का और धर्मदेशना
ने का निषेध करना सर्वथा अनुचित है।

४५—जो महाशय "एकान्ते नैव सर्व्वथा तद्धर्म्म कथनं न नैव सुन्दरं भव्यम्" इस
ाक्य से शास्त्रों की देशना धर्म कथा करने का साध्वियों को सर्वथा एकान्त रूप से निषेध
रते हैं यह भी अनुचित है "सिद्ध प्राभृत" "नन्दीसूत्र की टीका" और "सिद्धपंचाशिका
चूर्णि" आदि सर्व मान्य प्राचीन शास्त्रों में मल्लीस्वामी आदि स्त्री तीर्थंकरी तथा अन्य
ामान्य साध्वियों को धर्मोपदेश देने का खुलासा उल्लेख है, इसके पाठ भी ऊपर बता
के हैं। इसलिये जीवानुशासन का उपरोक्त वाक्य सर्व साध्वियों के लिए ठहराने वाले
भिनिवेशिक मिथ्यात्व से उन्मार्ग की प्ररूपणा करनेवाले बनते हैं।

४६—एक गाथा का अर्थ न बतलाने सम्बन्धी याकिनी महत्तरा साध्वी बाबत हरि-
द्रसूरिजी का कथन बतलाकर सर्व साध्वियों को व्याख्यान वांचने का निषेध करनेवाले
ध्या हठाग्रही ठहराते हैं, इस विषय में अधिक खुलासा ऊपर में लिख चुके हैं।

४७— जिस समय अपने मिथ्यापक्ष को स्थापन करने के लिए और दूसरों के सत्यपक्ष
ा निषेध करने के लिए जिस मनुष्य को हठाग्रह हो जाता है वह अपने हठाग्रह की धुन
पुर्वापर का विचार किये विना अंटसंट लिख मारता है। वही दशा इस स्थान पर साध्वी
ा व्याख्यान निषेध करनेवाले ज्ञानसुन्दरजी आदि महाशयों की हुई है। देखो—यहाँ पर तो
ीवानुशासन का उपरोक्त प्रमाण बतलाकर "साध्वीनां प्रतिषेधोनिराकरणं सिद्धान्तदेशनाया
ागम कथनस्य" इस वाक्य से साध्वियों को व्याख्यान बांचने का सर्वथा निषेध करते हैं
ौर "क्या पुरुषों की परिषद् में जैन साध्वी व्याख्यान दे सकती है" इस ट्रेक्ट के पृष्ठ ५
१३ वी पंक्ति से २० पंक्ति तक इस प्रकार लिखा है :—

"यदि साध्वियों द्वारा जन कल्याणही करवाना है तो आज स्त्री समाज का क्षेत्र कम
हीं है वे साध्वियाँ महिलाओं को उपदेश देकर उनका उद्धार करें और यह कार्य कोई
ाधारण भी नहीं है एक महिला समाज का सुधार हो जाय तो अखिल संसार का कल्याण
ो सकता है। ज्ञातासूत्र में आर्या गोपालिका तथा निरियावलिका सूत्र में साध्वी सुव्रता

ने महिला समाज को उपदेश दिया था अतः साध्वी स्त्री समाज को उपदेश देकर उनका कल्याण करे उसमें सब संसार का भला है।"

इस लेख में निरियावलका सूत्र और ज्ञातासूत्र के प्रमाण से साध्वियों को श्राविकाओं के सम्मुख धर्मदेशना देने की आज्ञा स्वीकार करते हैं, इस प्रमाण से जीवानुशासन ग्रन्थ के उपरोक्त प्रमाण से सर्वथा एकान्तरूप से साध्वियों को धर्मदेशना देने का निषेध मिथ्या ठहरता है, जिस प्रमाण को आप बड़ी शूरवीरता से पेश करते हैं, उसी बात को आप अपने लेख से अप्रमाणित साबित करते हैं, जब साध्वियों के लिए स्त्रियों की सभा में धर्मदेशना देना मंजूर करते हैं, तब धर्मदेशना का सर्वथा निषेध करना व्यर्थ ठहरता है। तथा स्त्रियों को धर्मदेशना सुनाना और पुरुषों को नहीं सुनाना या पुरुषों को नहीं सुनने देना ऐसा किसी भी शास्त्र का प्रमाण नहीं हैं, परन्तु-स्त्री पुरुष दोनों एक साथ मिलकर साध्वी की धर्मदेशना सुन सकते हैं। इस विषय में हम ऊपर अनेक प्रमाण बतला चुके हैं। इसलिए साध्वी को धर्मदेशना देने का निषेध करनेवाले बड़ी भूल करते हैं।

४८—जैन शासन में साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका इस प्रकार चतुर्विध संघ की स्थापना तीर्थंकर भगवान् करते हैं, संघ का मुख्य कर्तव्य तप-संयम स्वाध्याय द्वारा आत्मकल्याण करना, आत्मकल्याण के साथ २ दूसरे भव्य जीवों को धर्मोपदेश से धर्म प्रवृत्ति कराकर परोपकार करना। धर्मदेशना स्वाध्याय में समझी जाती है, स्वाध्याय करना चारों प्रकार के संघ का खास कर्तव्य है; इस बात का भावार्थ समझनेवाले और जो शास्त्र प्रमाण हम ऊपर में बतला आये हैं, उन्हीं को समझनेवाले कोई भी सज्जन साध्वी को धर्मदेशना देने का निषेध नहीं कर सकते, जिसपर भी सागरसुन्दरजी आदि जो महाशय साध्वी की देशना का निषेध करने के लिए बड़ा आग्रह कर रहे हैं, उन लोगोंका साध्वियोंके प्रति द्वेष मालूम होता है, क्योंकि खुद व्याकरण पढ़े नहीं, सूत्रों की टीका का व्याख्यान सभा में नहीं कर सकते और कई अच्छी पढ़ी लिखी साध्वियाँ सूत्रों की टीका का सभा में व्याख्यान बांचती हैं, उनका प्रभाव भी समाज में अच्छा पड़ता है, यह बात साध्वी समाज के द्वेषियों से सहन हो नहीं सकती इसलिए साध्वी समाज की निन्दा बुद्धि में उनको नीचा दिखाने के लिए और अपना [illegible] के लिए साध्वी के धर्मदेशना का निषेध करते हैं और भद्र जीवों को भ्रमजाल में फंसाने के लिए कई प्रकार की कुयुक्तियां करते हैं। उन कुयुक्तियों का समाधान यहां पर किया जाता है।

[illegible] साध्वी [illegible], व्याख्यान बांचती [illegible] इसलिए साध्वी का [illegible] क्योंकि [illegible]

५१—अगर कोई कहे कि छः छेद और चौदह पूर्व पढने की साध्वी को मनाई है, तो फिर साध्वी व्याख्यान कैसे वांच सकती हैं। यह कहना भी अनुचित है? क्योंकि—छ छेद और चौदह पूर्व आदि पढने की तो सामान्य साधु को भी मनाई है, उनका पढना योग्यतानुसार होता है पर व्याख्यान तो सामान्य साधु भी वांच सकता है, उस प्रकार साध्वी भी व्याख्यान बांच सकती है। कहीं कहीं ऐसा भी देखा जाता है कि कोई बहुत विद्वान होने पर भी प्रभावशाली उपदेश नहीं दे सकते हैं और कई अल्प पढे हुए भी 'अच्छा प्रभावशाली' उपदेश दे सकते हैं, इसलिए पढने की बात बतलाकर उपदेश देने की मनाई करना उचित नहीं हैं, साध्वियाँ केवल ज्ञान प्राप्तकर अनन्त जीवों का उद्धार करके मोक्ष में जाती हैं। उस बात को समझनेवाले कोई भी बुद्धिमान व्याख्यान वांचने की मनाई कभी नहीं कर सकते।

५२—अगर कोई कहे कि—साध्वी को संस्कृत पढने की मनाई है, और सूत्रों की टीका संस्कृत में है। इसलिए संस्कृत पढे बिना टीका समझ में नहीं आसकती, तो फिर व्याख्यान कैसे वांच सकती हैं। यह कथन भी उचित नहीं, साध्वी को संस्कृत पढने की मनाई किसी भी शास्त्र में नहीं है, यह तो अनसमझ लोगों ने हठाग्रह के वश में प्रत्यक्ष मिथ्या बात का प्रपंच फैलाया है, अभी वर्तमान में तपगच्छ की ही साध्वियाँ, लघुशांति, बृहद्शांति, भक्तामर, स्नातस्या और सकलाऽर्हत् आदि अनेक स्तोत्र स्तुति पढती हैं तथा अभी कुछ वर्ष पहिले आगमों की वांचना के समय में साधुओं के साथ साथ ही साध्वियों को भी, खास आनन्दसागरजी (सागरानन्द सूरिजी) ने सूत्रों की टीका बंचाई है। और जब कि ग्यारह अंगो को पढने की साध्वियों को आज्ञा है, तो फिर उसकी व्याख्या पढने का निषेध कैसे हो सकता है।? कभी नहीं? ग्यारह अंगों की तरह उनकी व्याख्या रूप अर्थ भी पढने की साध्वी को भगवान की आज्ञा है। अतएव सूत्रों की संस्कृत टीका तथा सूत्रों को साध्वी व्याख्यान में बांच सकती है।

५३—कई महाशय-चौदहपूर्वो को संस्कृत भाषा में जानकर साध्वियों को पूर्व पढने की मनाई समझते हैं, यह भी उनकी भूल है, क्योंकि संस्कृत भाषा के स्तोत्र चरित्र और सूत्रों की टीका आदि साध्वियाँ पढती हैं, यह बात सर्व गच्छों में सब साधुओं को भी मान्य है इसलिए संस्कृत भाषा में पूर्व होने से साध्वियाँ, पूर्वों की पढाई नहीं कर सकतीं, यह बात नहीं है किन्तु पूर्वों में मंत्र तंत्र यंत्र और वनस्पति आदि की अपूर्व शक्ति और अनेक प्रभावशाली दिव्य वस्तुओं का संग्रह तथा अन्य भी अनेक गम्भीर विषयों का प्रतिपादन होने से सामान्य साधु साध्वियों को पढने की मनाई हो सकती है। और प्रतिक्रमण में "नमोऽस्तु वर्द्धमानाय" नहीं पढतीं जिसका कारण भी संस्कृत भाषा का नहीं किन्तु उसका उच्चारण "बाल वृद्ध मंदबुद्धिवाली स्त्रियाँ (साध्वियाँ) स्पष्ट रूप से नहीं कर सकतीं और "संसार दावा" सब के मुख से उच्चारण होसके इसलिए "संसार दावा" बोलती है। और भी देखिये ....

कुछ ग्रन्थ प्राकृत भाषामें होनेपरभी उनमें उत्सर्ग अपवाद विधिवाद और चरितानुवाद आदि अनेक गम्भीर विषयों का संग्रह होने से और कई बातों का भावार्थ, गुरुगम्य होने से सामान्य बुद्धिवाले साधु साध्वियों को पढने की मनाई की गई है। परन्तु निशीथ-सूत्र आदि छेद-सूत्र महत्तरा को (बडी साध्वी को) पढने की आज्ञा भी है, इसलिए संस्कृतभाषा साध्वियाँ नहीं पढ सकतीं ऐसा कहना अनुचित है, और "संसार दावा" सम संस्कृत प्राकृत है इसलिए केवल प्राकृत कहना अज्ञानता है, चौदह पूर्व और छेद ग्रन्थ पढने का बहाना लेकर धर्मोपदेश का निषेध करना उचित नहीं है।

५४—अगर कहा जाय कि साध्वी श्रावक श्राविकाओं की सभा में व्याख्यान बांचेगी, तब श्रावकों के सामने देखना पडेगा, सामने देखने से ब्रह्मचर्य की वाड का भंग होगा और मोहभाव उत्पन्न होकर भविष्य में ब्रह्मचर्य की हानि होने की संभावना होगी? इसलिए साध्वी को सभा में व्याख्यान बांचना योग्य नहीं। ऐसा कहनेवाले जैन सिद्धान्तों की स्याद्वाद-अनेकान्त शैली को समझनेवाले नहीं मालुम होते हैं। क्योंकि मोहभाव से साध्वी को पुरुषों के सामने देखने की मनाई है। परन्तु उपकार बुद्धि से संसार की, शरीर की, कुटुम्ब की, धन सम्पदा की और आयुष्य आदि की अनित्यता अशारता बतलाते हुए, धर्मोपदेश देते समय सामान्यतया करुणा बुद्धि से यदि पुरुषों के सामने देखा भी जावे तो कोई दोष नहीं आसकता देखिये—दशवैकालिक सूत्र के आठवें अध्ययन की ८१वीं गाथा में लिखा है जिस तरह सूर्य के ऊपर दृष्टि पडने पर तत्काल पीछी खींच लेते हैं उसही तरह से साधु की यदि स्त्री के ऊपर दृष्टि पड जावे तो शीघ्र पीछी खींच लेनी चाहिए, जिसपर भी साधु को स्त्रियों के व्रत पच्चक्खाण आदि करवाते समय स्त्री के सामने देखना पडता है। तो भी मोहभाव न होने से किसी प्रकार का नुकसान नहीं हो सकता, परन्तु रागभाव से सामने देखने का निषेध है। फिर भी देखिये—अभी पढी लिखी विदुषी साध्वी के पास में कुछ श्रावक मिलकर किसी प्रकार का प्रश्न पूछने के लिए या धर्म की चर्चा करने के लिए जाते हैं और साध्वियाँ भी उन्हें अपनी बुद्धि के अनुसार समाधान भी करती हैं-धर्मोपदेश देतीं हैं। इसही तरह से साध्वियों के पास में श्रावक श्राविकायें व्याख्यान सुनने को जासकते हैं, इसमें कोई दोष नहीं है।

५५—दूसरी बात यह है कि, कर्मग्रन्थ में पुरुष वेद का उदय घास की अग्नि के समान तथा स्त्री वेद का उदय छानों की अग्नि (भोभर) के समान और नपुंसक वेद का उदय नगर-दाह की अग्नि के समान कहा है, अब यहाँ पर विचार करने का अवसर है कि शास्त्र के अनुसार वेद के उदय मूजब विकार भाव पैदा होने में स्त्रियों से भी पुरुषों में धैर्यता कम साबित होती है, इससे जब साधु व्याख्यान बांचता हो उस समय स्त्रियाँ वस्त्र आभूषणादि शृंगार सजकर जेवर का झनकार करती हुई और विनय भाव का लटका करती हुई व्याख्यान में आती हैं उसको देखने की [illegible]

प्रकार साधु को भी व्याख्यान नहीं वांचना चाहिये । परन्तु ऐसी मिथ्यात्व की बढ़ानेवा मिथ्या भ्रम जनक कल्पना सर्वज्ञ भगवान की आज्ञा पालन करनेवालों के मन में कभी भ उठ सकती पर करुणा बुद्धि से संसार दावानल में जलते हुए और रोग, शोक वियोग आ दुःखों से आर्तध्यान करते हुए प्राणियों को उद्धार करने की भावना से शान्त रस मय वैरा उत्पन्न करनेवाला सर्वज्ञ भाषित धर्मोपदेश का व्याख्यान चलता हो, उस समय चाहे साधु या साध्वी हो अपने पुत्र पुत्री के तुल्य श्रावक श्राविकायें भगवान की वाणी सुनने को साम बैठे हों उन्हीं के सामने सामन्यतया उदासीनभाव से देखने में आवे तो उस समय विकारभा का प्रसंग नहीं है । ऐसे अवसर पर विकारभाव नहीं हो सकता है, इसलिए विकारभ होने का बहाना लेकर साध्वीमात्र को ही व्याख्यान वांचने का ही निषेध करने रूप भ्र फैलानेवाले बड़े अज्ञानी ठहरते हैं ।

५६—फिर भी देखिये—अगर सभा में सामान्यतया सामने देखने से ही विकारभ पैदा होता हो तब तो खास भगवान के सामने समवसरण में ही गौतमस्वामी आदि सा साध्वियों को दिखाने के लिए ही इन्द्रादि देव वैराग्यमय अनेक तरह का नाटक करते वहाँ पर दिव्य मनोहर अनेक स्त्री पुरुषों के रूप साधु साध्वियों के देखने में आते हैं, त सी सब को विकारभाव होने का कभी नहीं कह सकते । इसी तरह से साध्वी भी व्याख्या समय सामान्यतया पुरुषों के सामने निर्विकारभाव से देख लेवें तो उसमें विकारभाव उत्प होने का सब को कभी नहीं कह सकते हैं ।

५७—अगर कहा जाय कि—अमुक गाँव में एक अमुक साध्वी व्याख्यान वांचती थ एक श्रावक के साथ उसका अति परिचय होगया वह श्रावक भी उस साध्वी के पास बार बार अकेला जाने लगा आपस में मोहभाव से बिगाड होकर धर्म की बहुत हानि हुई इसलि साध्वी को व्याख्यान वांचना उचित नहीं है, ऐसा कहकर सब साध्वियों को व्याख्यान वांचने का निषेध करना बड़ी भूल है । साध्वी ने श्रावक के साथ अति परिचय किया जिससे इस प्रकार नुकसान हुआ । परन्तु समुदाय में व्याख्यान वांचने से किसी प्रकार का नुकसान नहीं हो सकता देखिये—किसी साधु के पास में कोई श्राविका वन्दना करने को आती है और साधु उस श्राविका के घर में आहार पानी आदि के लिए बारम्बार जाता हो ऐसी दशा में कभी अति परिचय होकर मोहभाव से ब्रह्मचर्य की हानि हो जाय अथवा सर्वथा धर्मभ्रष्ट हो जावे, तो उसके कर्म की गति परन्तु उस एक का दृष्टान्त बतलाकर सब श्राविकाओं को गुरु महाराज के पास में वन्दना करने को आने का और सब साधुओं को श्राविकाओं के घरों में आहार पानी आदि के लिए जाने का निषेध कभी नहीं हो सकता इसलिए अकेली साध्वी का दृष्टान्त बतलाकर के समुदाय में सब साध्वियों के व्याख्यान वांचने का निषेध करना सर्वथा अनुचित है

५८—फिर भी देखिये—जिसके मन में जैसा भाव भरा रहता है वह हर बहाने
प्रसंग पर उसकी चेष्टा करके अपने मनोगत भाव को प्रकाशित कर देता है, उसको
मान मर्मज्ञ लोग उसकी चेष्टा से उसके मनोगत भावना को समझ लेते हैं। इसही तरह
ी व्याख्यान बांचेगी तो लोगों के सामने देखने पर विकार भाव पैदा होगा। ऐसा
ार कहनेवालों को ही विकारी भाववाले समझने चाहिये। क्योंकि जिसने अपनी आत्मा
ल्याण के लिए संसारी माया छोडकर पंच महाव्रत लिये हैं तथा दूसरों का उद्धार करने
जेसके मन में हमेशा वैराग्य भावना लगी रहती है वह साध्वी व्याख्यान समय सामान्य-
निर्विकार भाव से उपकार बुद्धि से हित शिक्षा देती हुई पुरुषों के सामने देख भी ले तो
केसी प्रकार का विकार भाव पैदा नहीं हो सकता है, परन्तु जिसके मन में विकार भाव
रहता है वह सब में अपने जैसा विकार भाव देखता है, उसके कर्म की गति उनके
े लिखने या वारम्वार बकवाद करने पर भी कुछ नहीं हो सकता है, परन्तु ऐसा करके
वी समाज पर मिथ्या आरोप लगाने से दुर्लभ बोधि—अनंत संसार वृद्धि के कर्म
श्य ही बांधेगे। क्योंकि सिद्धप्राभृत, नन्दी सूत्र की टीका आदि अनेक शास्त्रों के प्रमाण
ऊपर बता चुके हैं, उन्हों में ज्ञानी पूर्वाचार्यों ने श्रावक श्राविकाओं के सामने साध्वियों
धर्मोपदेश देने की आज्ञा दी है, इसलिए ऐसी कुयुक्तियाँ करनेवाले अज्ञानी ठहरते हैं,
ी एक व्यक्तिगत का दृष्टान्त सब के ऊपर लागू नहीं हो सकता है।

५६—अगर कहा जाय कि—किसी साध्वी को केवल ज्ञान प्राप्त हो जाय तो उसको
मस्थ साधु वन्दना नहीं करते हैं, तो फिर साध्वी व्याख्यान कैसे वांच सकती है? ऐसा
कर जो महाशय साध्वियों को व्याख्यान वांचने का निषेध करते हैं उनका बड़ा ही अनु-
ा हठाग्रह है क्योंकि-वंदना करना अलग विषय है और व्याख्यान बांचना अलग विषय
देखिये—जैन शास्त्रों में गुणों की पूजा है परन्तु व्यक्ति की नहीं। "गुणाः सर्वत्र पूज्यन्ते,
त्र जाति र्न च वयः" इस प्रकार सब जगह गुणों की पूजा होती है। इसलिए अगर साध्वी
केवल ज्ञान और केवल दर्शन प्राप्त हो जावे तो वह सब के भाव से वन्दनीय पूजनीय
ाश्य है। और उनसे अपना संदेह भी पूछ सकते हैं परन्तु सिर्फ अज्ञानी लोगों के (व्यवहार
रुद्ध) संशय का कारण न होने के लिए द्रव्य से पंचांग नमाकर वन्दना करने का व्यवहार
धु का नहीं है, परन्तु केवल ज्ञानी साध्वी या अन्य छद्मस्थ साध्वी देशना देती हो तो
नको विद्याधर देवता और श्रावक श्राविका आदि सुनकर लाभ उठा सकते हैं। इसमें किसी
कार का दोष नहीं है इसलिए साधु के द्रव्य से व्यवहारिक वन्दना करने की बात बतलाकर
मेदेशना देने का निषेध करना सर्वथा अनुचित है। फिर भी —यहाँ पर आपको

[illegible]

[illegible] अगर कहा जाय कि साध्वी को आहारक लब्धि नहीं होती तो फिर साध्वी व्याख्यान कैसे बांच सकती है। ऐसा कहनेवालों को साध्वियों के व्याख्यान बांचने के ऊपर बड़ी ही द्वेष मालूम होता है। क्योंकि साध्वी अगर विराधक होकर अनेक प्रकार के दुष्कर्म करे तो भी [illegible] करके साध्वी नरक में नहीं जा सकती और शुद्ध संयम पालन करती हुई उत्कृष्ट [illegible] भाव से गुणठाणों में चढ़कर शुक्ल ध्यान से घनघाती कर्म क्षय करके केवल ज्ञान प्राप्त करके मुक्ति में जासकती है। इसलिए आहारक लब्धि न हो तो भी व्याख्यान बांचकर परोपकार करने में किसी प्रकार की बाधा नहीं आसकती। ऐसी २ कुयुक्तियें करने पर भी साध्वी को व्याख्यान बांचने का निषेध नहीं हो सकता। परन्तु जिन मनुष्यों को अपने स्वार्थवश दूसरों से द्वेष हो जाता है तब सत्यासत्य का विचार किये बिना ही दूसरों के अवगुण कहने लग जाते हैं। इसही प्रकार कई साधु लोगों के और उन साधु लोगों के दृष्टि रागी पक्षपाती श्रावकों के भी साध्वियों के व्याख्यान पर अन्तर का पूर्ण द्वेष होगया है, जिससे संयमी साध्वी के ज्ञान गुणोंको और उनके व्याख्यान आदि से होनेवाले शासनहित, परोपकार, जीवदया, व्रत पच्चक्खाण, सम्यक्त्व प्राप्ति आदि अनेक धर्मकार्यों के लाभ को न देखते हुए केवल व्याख्यान बांचने का निषेध करने की ही दुर्बुद्धि हुई है। इसलिए आहारक लब्धि आदि बिना प्रसङ्ग की बातें बतलाकर विषयांतर करके भोलेजीवोंको भ्रम में डालते हैं।

६१—अगर कहा जाय कि "बृहत्कल्प" सूत्र में लिखा है कि—जिस मकान में साध्वी ठहरी हो यदि उस मकान का दरवाजा खुला हो तो उसके आगे एक पडदा दरवाजे के फाटक पर बांध देना चाहिए, जिससे दूसरे पुरुषों की दृष्टि साध्वी पर न पड सके। जब साध्वियों के लिए इस प्रकार का नियम है तो फिर साध्वियाँ श्रावक श्राविकाओं के समुदाय में व्याख्यान कैसे बांच सकती हैं? इस प्रकार शंका करनेवाले जैन शास्त्रों के अति गंभीर भावार्थ को नहीं जाननेवाले मालूम होते हैं क्योंकि देखिये—साध्वियाँ आहार करती हो अथवा पडिलेहन आदि करती हो उस समय किसी प्रकार का कुछ अंग खुला हो ऐसी दशा में अन्य पुरुष की दृष्टि पडना अनुचित है। अथवा अन्य मतवालों की दृष्टि बचाने के लिए और अपने स्वाध्याय ध्यान आदि धार्मिक कार्यों में किसी प्रकार की बाधा न होने के हेतु खुले दरवाजे

६४—फिर भी देखिये—श्री महानिशीथसूत्र आदि अनेक शास्त्रों में उपधान वहन किये बिना श्रावक-श्राविकों को नवकार मंत्र पढ़ना गुणना नहीं कल्पता ऐसी विधि प्रतिपादित है, परन्तु द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावानुसार अभी बिना उपधान वहन किये लाखों श्रावक-श्राविकाओं को नवकार मंत्र साधु साध्वी सिखाया करते हैं, यह बात प्रसिद्ध ही है। इसही प्रकार कल्पसूत्र भी पहिले तो पर्युषणा की रात्रि में संवत्सरी प्रतिक्रमण किये बाद सर्व साधु काउस्सग ध्यान में सुनते और एक साधू सब को सुनाता था यह विधि थी। परन्तु आज प्रत्येक गाँवों में नगरों में प्रति वर्ष सब के सामने कल्पसूत्र बांचने की प्रवृति शुरू है। जिस नगर में साधुओं का चौमासा हो आचार्य उपाध्याय आदि पदवीधर मौजूद हों तो भी बड़े बड़े शहरों में बहुत जगह यत्ति श्री पूज आदि से भी कल्पसूत्र वंचाते हैं। ऐसी दशा में महाव्रतधारी पढ़ी लिखी विदुषी साध्वी पर्युषणा के व्याख्यान में कल्पसूत्र बांचकर सुनावे तो इसमें कोई हानि नहीं। जिस पर भी जो महाशय श्रावक-श्राविकों के सामने साध्वी को व्याख्यान बांचने का और पर्युषणों में कल्पसूत्र बांचने का निषेध करते हैं वह महाशय मिथ्या हठाग्रह करते हैं।

६५—अगर कहा जाय कि—जिस तरह से साधुओं को जब केवलज्ञान होता है तो देवता आकर उत्सव करते हैं और स्वर्ण कमल रचते हैं उस पर बैठकर केवलज्ञानी देशना देते हैं। इसही तरह से साध्वी को भी केवलज्ञान होवे तब साधुओं की तरह केवलज्ञान का महोत्सव करने का तथा स्वर्ण कमल की रचना करने का और उस स्वर्ण कमल पर केवलज्ञानी साध्वी बैठकर धर्म देशना देने का किसी भी शास्त्र में देखने में नहीं आता। तो फिर अभी साध्वियाँ व्याख्यान कैसे बांच सकती हैं? यह कथन भी अनुचित है। क्योंकि देखिये—जिस प्रकार पुरुष के दीक्षा लेने के समय महोत्सव होता है, उसही तरह स्त्री के भी दीक्षा लेने के समय में महोत्सव होता है, यह बात "भगवती" "ज्ञाताजी," "अन्तगड दशा" आदि अनेक शास्त्रों के प्रमाणानुसार जैन समाज में प्रसिद्ध है, जब दीक्षा लेने के समय पुरुष और स्त्री दोनों के लिए अपने २ पुन्यानुसार महोत्सव होने का अधिकार है चन्दनबाला आदि के दीक्षा समय महोत्सव होने का कल्पसूत्र की टीकाओं आदि शास्त्रों में उल्लेख आता है तब दीक्षा लिए बाद उत्कृष्ट तप संयम की आराधना करके क्षपक श्रेणी चढ़कर शुक्ल ध्यान से घनघाती कर्मों का क्षय करके अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन की प्राप्ति कर लेवें ऐसी महान् शुद्ध निर्मल आत्मा के लिए केवलज्ञान का महोत्सव तथा धर्म देशना देने का निषेध करना कोई भी बुद्धिमान नहीं मान सकता और साधु हो अथवा साध्वी हो उनके लिये किसी बात का महोत्सव होना, देवता या मनुष्यों का आना, वंदन-पूजन-मान-सत्कार का होना ये बातें अपनी २ पुण्य प्रकृति के अनुसार होती हैं। और किसी २ मुनियों के प्राणांत उपसर्ग के समय भी कोई देवता या मनुष्य नहीं आते, और प्राणान्त होने पर आयु पूर्ण करके देवलोक

में चले जाते हैं अथवा कोई केवलज्ञान पाकर निर्वाण प्राप्त कर लेते हैं। इसलिए साधुओं की तरह साध्वियों के केवलज्ञान महोत्सव होने का या देशना देने का निषेध किसी प्रकार नहीं हो सकता। जिस साध्वी के छद्मस्थ अवस्था में अथवा केवली अवस्था में जितने २ देशना देने के लिए परोपकारी भाषावर्गणा के पुद्गलों का जितना २ बंध पड़ा होगा उनको भोगने के लिए (क्षय करने के लिए) देशना देकर परोपकार अवश्य कर सकती हैं। यह कर्म सिद्धांत के अनुसार अनादि सिद्ध नियम है, इसको कोई भी अन्यथा नहीं कर सकता।

६६—फिर भी देखिये—गृहस्थ लोग हर समय, छः काय के जीवों की विराधना करते हुए १७, १८, पापस्थानों का सेवन करके कुटुम्ब, शरीर आदि की मोह माया से, क्रोधादि कषायों से अनेक प्रकार के कर्म बंधन करते रहते हैं। ऐसी दशा में साध्वीगण ग्राम नगर आदि में विहार करती हुई श्रावक-श्राविकाओं के समुदाय में जब तक व्याख्यान बांचती रहेगी, तब तक भव्य जीवों के पूर्वोक्त कर्म बंधनों के कारणों से छुटकारा रहेगा, और भगवान की वाणी सुनकर वे लोग परमानन्द प्राप्त करेंगे, शुभ ध्यान से अनेक भवों के अशुभ कर्मों का नाश होगा तथा साध्वीगण की देशना से सामायिक, प्रतिक्रमण, पौषध, दान शील, तप, भाव, आदि शुभ कार्यों से अनेक प्रकार का लाभ प्राप्त होगा और कई भव्य जीव वैराग्य पाकर गृहस्थाश्रम छोड़कर संयम लेकर अपना आत्म कल्याण करेंगे, इसीलिये सिद्ध प्राभृत आदि में साध्वी के उपदेश से पुरुषों का सिद्ध होना लिखा है। इस प्रकार साध्वीगण के व्याख्यान से अनन्त लाभ हुए हैं, होते हैं, और आगे भी होते रहेंगे, ऐसे सब जीवों के अभयदान के हेतु आदि अनेक लाभों का विचार किये बिना अभी तुच्छ बुद्धि अज्ञानतावश साध्वीगण का व्याख्यान निषेध करके उपरोक्त पाप प्रवृति का कारण और धर्म कार्यों की अन्तराय करते हैं यह सर्वथा अनुचित है।

६७—कई महाशय कहते हैं कि—भगवान् महावीर स्वामी के सामने दीक्षा ली हुई ३६००० साध्वियां थी, उनमें १४०० साध्वियों को तो केवलज्ञान होगया था। और अन्य साध्वियां भी ११ अंग आदि आगम पढ़ी हुई थीं परन्तु उनमें से किसी ने भी श्रावक श्राविकाओं के सामने देशना दी हो व्याख्यान बांचकर किसी को प्रतिबोध दिया हो, ऐसा किसी भी शास्त्र में लिखा हुवा देखने में नहीं आता, तो फिर अभी की साध्वियें व्याख्यान कैसे बांच सकती हैं। यह कथन भी अनसमझवालों का ही है, क्योंकि देखिये—भगवान् के सामने ३६००० साध्वियें मौजूद थीं, और लाखों श्रावक व्रतधारी मौजूद थे परन्तु किसी साध्वी को किसी भी श्रावक ने दान दिया हो या वस्त्र पात्र कम्बलादि वहोराये हों ऐसा किसी भी शास्त्र में व्यक्तिगत नाम लेकर लिखा हुवा देखने में नहीं आने पर अगर कोई कुतर्क करे कि—किसी श्रावक ने किसी साध्वी को दान नहीं दिया, ऐसा कहनेवाले को अज्ञानी सम

दान देने का किसी व्यक्तिगत नाम का उल्लेख किसी शास्त्र में न होने पर भी दान देने माना जाता है इसी प्रकार पढी लिखी छद्मस्थ साध्वी हो या केवलज्ञानी साध्वी हो उनके परोपकार के लिये भाषावर्गणा के पुद्गल बंधे हुवे होंगे तो वह साध्वी श्रावक श्राविकादि भव्य जीवों के सामने अवश्य ही देशना देकर परोपकार कर सकती है। क्योंकि खास केवलज्ञानी तीर्थंकर भगवान् के ही जब तक भाषावर्गणा के पुद्गलों का बंध रहता है तब तक ही देशना देकर परोपकार कर सकते हैं, और भाषावर्गणा के पुद्गलों का क्षय होने पर देशना बंधकर देते हैं अथवा अनशन कर लेते हैं। इसी तरह से छद्मस्थ साध्वी हो या केवली साध्वी हो अथवा साधु हों या कोई भी संसारी प्राणी हो जब तक जिसके भाषावर्गणा के पुद्गलों का बंध रहेगा तब तक ही वह बोल सकता है, और निकटवाले हर कोई प्राणी सुन सकते हैं, इस बात को भगवान् की वाणी पर श्रद्धा रखनेवाला कोई भी जैनी निषेध नहीं कर सकता, इसी तरह से संयमी पढी लिखी साध्वी अपने भाषावर्गणा के पुद्गलों को क्षय करने के लिये धर्मदेशना दे सकती है और कोई भी भव्यजीव उनकी देशना सुनकर लाभ उठा सकते हैं। अब मेरा यही कहना है कि –भगवान् के शासन में किसी भी साध्वी ने व्याख्यान नहीं बांचा ! ऐसा कहने वाले प्रत्यक्ष मिथ्यावादी हैं इस विषय में अनेक शास्त्रों के प्रमाण ऊपर बतला चुके हैं। जब कि—साध्वियों को बारह १२ प्रकार का तपाधिकार में ५ प्रकार के स्वाध्याय करने का ग्यारह ११ अङ्ग पढने का तथा आत्म कल्याण के साथ भव्य जीवों का परोपकार करने का पूर्णतया (सब तरह से) अधिकार है उसमें देशना देने का भी अधिकार आजाता है, और आवश्यकादि अनेक शास्त्रों में –

चत्तारि मंगलं, अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहु मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारि सरणं पवज्जामि, अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहु सरणं पवज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि॥

[illegible]

परिशिष्ट नं. १

जो साधुओं ने अपने आश्रित साध्वियों को व्याख्यान वांचना निषेध करके ज्ञान अंतराय की, उनकी साध्वियों की कैसी दुर्दशा हुई उसका दिग्दर्शन कराने वाला १ पत्र पु० ३७ अंक ४० का १६। १०। ३८ का विक्रम् १९९४ आसो वदि ८ रविवार नगर से प्रकाशित हुआ वह लेख नीचे उद्धृत किया जाता है—

साध्वी संस्था आजे समाज माटे कोयड़ा रूपे केम बनी ?

[लेखिका—साध्वी खान्तिश्रीजी]

आजे केटलाये समय थया पुरुष वर्ग "स्त्री" नी शक्ति, बल अने बुद्धि केवी रीते दबावी छे? केटली हदे तेने नीचे उतारी पाड़ी छे? तेनो जो उल्लेख करवा मां आवे तो मोटुं एक थाय; परन्तु अत्यारे ए विवेचन नहीं करता साध्वी संस्था तरफ लक्ष खेंचाय छे। आजे वयो मां अज्ञान, कुसंप, झगड़ा अने कुथलीओ केम वधी ? तेनुं जरा निरीक्षण करीए। पहेलां तो घरनी अंदर स्त्रिओ नै कोई पण प्रकारनी केलवणी अपाती नथी। तेना मां संस्कार रेड़ाता नथी। तेथी घरनी अंदर केम वर्त्तवुं ? ते तेनी समझ मां होतुं नथी। वणी नहीं पामेली स्त्रिओ माता पुत्री, सासू वहू, देराणी जेठाणी अने नणंद भोजाई स आपस मां लड़वुं काम माटे हुशा तुशी करवी एक बीजा पर हुकुमो चलाववा—आवो व चाली रह्यो होय छे।

वली पुरुषों नी बीक थी कोई दिवस सारुँ पुस्तक वांचवुं के सद्गुरू नो संग करवो तो एने होय ज नहीं। एने तो घरनी चार दीवालों वच्चे रात दिवस पुराई रहवानु। जगतनी दर सुं सु चाली रहुं छे ? दुनिया कई दिशाए गमन करी रही छे ? एने भानज न होय, म के घरना काम मांथी ए ऊंची ज न आवे। आवी रीते तेनी बुद्धि अने शक्ति तोड़फाड़ ाय छे अने पोतानुं पराक्रम फोरवी शकती नथी।

कम भाग्ये ए बिचारी विधवा बने अने बे बरस खुणो पालवानुं होय। पछी विधवा नेली ते कंईक धर्म नो आश्रय ले छे। एटले के घरना काम थी परवारी देरासरे दर्शन करवां, गुरू महाराज ना दर्शन करवा अने प्रतिक्रमण करवा विगेरे क्रिया मा जोड़ाय। त्यां एने साध्वीजीओ ना संग थाय अने समझाववा मां आवे के बेन ! तारा एक पेट माटे शा सारू आवा घरनों धंधों कुटे छे ? हवे तारे घरमा शुं रह्यु छे नाहक एटला कर्म शा माटे बांधवा जोइए ? चाल तूं मारी चेली था, तने काम नहीं करवुं पड़े अने त्हारा आत्मा नो ... एना मन मां एम थाय छे ... या उपदेश ए अज्ञान बाईना हृदय मां वसी जाय। ...

तेमोना स्वार्थी हृदय नी अजाण विचारी सरल साध्विओ रखेने गुरुनो अविनय थई
तय, गुरु नाराज थइ जाय एम वीती मने के कमने एओ थी ना कार्यों करे छे। एवा कार्यों
साध्विओ ना पासे थी करावता एशुं साधुओ ने घटित छे? आगलना साधुओ साध्विओ
पासे थी शुं ए कार्यों करावता हता?

आगल वधी ए तारक गणाता गुरुओ, साध्विओ प्रत्ये आज्ञा छोड़े छे के—साध्विओ थी
सूत्र न वंचाय, व्याख्यान न अपाय। आवी रीत नी अटकायत थी साध्विजीओ संस्कृत अने
मागधी अभ्यास करतां अटकी जाय छे। कारण ज्यारे सूत्रो न वांचवा होय ने व्याख्यान न
आपवुं होय तो एवुं उच्च ज्ञान मेलवी शुं करे? आम निरुत्साह वनी अभ्यास मां ज्ञान मां
आगल वधी शकती नथी। वलके संयम नुं रहस्य समझवुं दूर रही जाय छे। में घणी
साध्वीजीओ ना मुख थी सांभल्युं छे के—अमोने व्याख्यान अने सूत्रो वांचवानी गुरु तरफ
थी आज्ञा नथी जेथी व्याख्यान सांभलवा गुरुनी साथे ज चौमासा करीए छीए। ज्यारे पुछवा
मां आवे के दर रोज व्याख्यान मां जता त्यारे दुखी हृदये जवाब आपी कहे के काम न होय
तो जइए। आवी सांभलनार ने आश्चर्य थया विना नहीं रहे। शुं मुनीराजो पोताना कार्यों
करावता साध्विओ ने साथे चोमासुं कराता हशे? आवा कारणों ने लई क्रमे परिचय वधतो
जाय छे अने छेवटे अति परिचय ना योगे जैन शासन ने लजवनारी गंदी वातो वहार आवेछे

हजु पण पूज्य मुनि महाराजो समझे अने साध्विओ उपर थी पोताना कार्यों नो बोज
उतारे तेमज व्याख्यान अने सूत्र वांचवानी छूट आपे, अभ्यास वधारवा खाश भलामण कं
तो आज नुं वातावरण (अज्ञान, कुसंप, कलह कुथल विगेरे) फरीजतां वार लागशे नहीं।
पछी समाज जोई शकशे के साध्वी संस्था केटलुं कार्य करी शके छे अने समाज ने केवी
उपयोगी थाय छे आगलनी महासती शिरोमणि साध्वीजीओ ज्ञान में वधेली होवा थी
चरित्र थी भ्रष्ट थता मोटा ऋषिओ ने पण सद्बोध थी मार्ग ऊपर लावी शक्या छे। एवा
अनेक दाखलाओ मौजूद छे। ते आजे कोई ना थी अजाण्युं नथी।

ते शक्ति आज पण नाश पामी नथी। जो तेने पुरती सगवड़ो करी देवा मां आवे तं
निस्तेज वनेली शक्ति सतेज वने एमां कांई आश्चर्य नथी।

आज श्रावको पण साधुओ ना भरमाव्या थी जेम के पुरुष पद प्रधान छे ने स्त्री नीच
छे तेथी साध्वियो प्रत्ये वहुज ओछी लागणी धरावे छे। तेमना व्याख्यान श्रवण थी प
श्रावको अभडाइ जाय छे। खरुं पूछो तो तो साध्वी जी प्रत्ये भाग्येज कोई पूज्य भ
धरावता हशे। साधुओ ने भणाववा माटे सौ सौ रुपया ना पगारदार पंडितो त्यारे साध्वि
माटे पांचनो ए नहीं। आशुं ओछी संकुचित दृष्टि कहेवाय।

[illegible] साध्वियो ने बहुमान नी दृष्टि थी जुए। साध्वीजीओ ना चौम
[illegible] । जो साध्वी संस्था सुधरशे तो जरूर

आम अमुक अपवाद ने बाद करता दुःख गार्भित के मोह वैराग्य थाय; ए ए मार्गे तैयार थाय। घर ना माणसो समझे ठीक थयुं। रोटला आपवा मळ्या कारण आजे घर मां फरती होय ए सौने मन काली नागणी भासे छे विधवा ऊपर जे सितमो गुजरे छे ते अत्यारे लखवा इच्छती नथी। आपणे साध्वी जीवन ज विचारवानुं छे। ए बाई कपड़ा दूर करी धोला वेश मां आवी जाय छे, अर्थात् परम पवित्र भागवती दीक्षा ने अंगीकार करे छे।

पछी तो आपणे जोइए छीए के सर्व काम नो बोझो शिष्याओ ऊपर ज मूकाय छे; अने वडीलो तरफ थी हुकमो नी हार माला तो चालू ज होय। जेम गृहस्थाश्रम मां सासु, सास पण भजवे तेम दीक्षा मां गुरू, गुरूपणुं भजवे छे। आ शुं तेमनी ओछी भूल कहेवाय? अलबत्त, गुरू नो विनय करवो, तेमनी आज्ञा मां खड़ा पगे ऊभा रहेवुं, परन्तु ते विषे तेमने कदर होवी जोइए पण आजे ए बधुं विसराइ गयुं छे। पोते तो चार पांच बाइओना घेर मां बेसी घरो घरनी पंचात कूटे अने विकथाओ मां उतरी पोता ना समय ने बरबाद करे छे शिष्याओ ने भणाववानी पण जरूरत नहीं एटले अभ्यास मां पण पछात। पंच प्रतिक्रमण कर्या ने चार आठ चोढालिया, थोड़ा क स्तवन सज्झायो कर्या एटले बेड़ा पार। पण हां क्यां थी बचे? गुरुणीओ भणेली होय त्यारे ने?

अज्ञानमय जीवन प्रथम थी ज हतूं ने पाछल थी पण तेम थवा पाम्युं। कलह, ईर्षा, अदेखाइ, चरसा चरसी विगेरे दूषणो जीवन मां जड़ घाली रहेल पहेले थी ज हता। तेने दूर करवा, जीवन सुन्दर बनाववा, त्यागी बनावनार त्यागीओ तरफ थी जराये सूचना के समझाववा मां आव्युं नहीं। समयनी कठिनता, आत्मा केम उज्वल बने? जीवन सुगंधी केम थाय? तेनुं एने भानज न कराव्युं। कारण एने तो घरना काममा थी मुक्त करवी हती अने चेलीनी लालसा हती ते काम तो अहींआं पण करवुं पड़े छे। कहो, हवे एना मां थी अज्ञान, कलह अने ईर्षा आदि दोषो कई रीतिए दूर थाय?

एटलुं ज नहीं पण पू० मुनिराजो नी उपाधि कंइ साध्वी संस्था माटे ओछी नथी। तेओ प्रथम थी ज 'स्त्रीवर्ग' ने दासी तरीके गणवा मां टेवाइ गएला होवा थी अने शास्त्र मां पण पदार्थ दाखलो (जेवो के सौ वर्ष नी दीक्षित साध्वी आज ना दीक्षित साधु ने वांदे) आगल धरी, साध्वी संस्था ने तुच्छपणी पोतानी ताबेदारी मां रहेवा हकुमत चलाववा हिम्मत करे छे।

गुरु नो विनय करवाना बहाना थी साध्वीजीओ पासे थी, गृहस्थो नी जेम मुनिराजो पोताना कपड़ा धोवा, ओघा पाणीना पाटा भरवा, कामळीओ नी कोरो चीतरवी, कपड़ा सीववा अने पात्रा रंगवाना कार्यो कराये छे। जाणे नोकरडीओ राखी होय तेम एक पछी एक काम तेओ तरफ थी तैयार ज होय।

केटला स्वार्थी हृदय नी अज्ञान विचारी सरल साध्वीओ रखेने गुरुनो अविनय थई जाय, गुरु नाराज थई जाय एम धोली गुरु ने कहने पाणी थी मां कार्यों करे छे। एवा कार्यो साध्वीओ ना पासे थी करावया ए शुं साधुओ ने घटित छे? आगलना साधुओ साध्वीओ पासे थी शुं ए कार्यों करावता हता?

आगल वधीने तारक थनारा गुरुओ, साध्वीओ प्रत्ये आज्ञा छोड़े छे के— साध्वीओ थी सूत्र न वंचाय, व्याख्यान न अपाय। आवी रीत नी अटकायत थी साध्वीजीओ संस्कृत अने मागधी अभ्यास करतां अटकी जाय छे। कारण ज्यारे सूत्रो न वांचवा होय ने व्याख्यान न आपवुं होय तो पछी उच्च ज्ञान मेलवी शुं करे? आम निरुत्साह थती अभ्यास मां ज्ञान मां आगल वधी शकती नथी। वळी संयम नुं रहस्य समजवुं दूर थती जाय छे। में घणी साध्वीजीओ ना मुख थी सांभळ्युं छे के—अमोने व्याख्यान अने सूत्रो वांचवानी गुरु तरफ थी आज्ञा नथी जेथी व्याख्यान सांभळवा गुरुनी साथे ज चोमासा करीए छीए। ज्यारे पूछ्या मां आवे के दूर रोज व्याख्यान मां जता त्यारे दुःखी हृदये जवाब आपी कहे के काम न होय तो जइए। आवी सांभळनार ने आश्चर्य थया विना नहीं रहे। शुं मुनीराजो पोताना कार्यों करावया साध्वीओ ने साथे चोमासुं कराता हशे? आवा कारणों ने लईने परिचय वधतो जाय छे अने छेवटे अति परिचय ना योगे जैन शासन ने लजवनारी गंदी वातो बहार आवे छे।

हजु पण पूज्य मुनि महाराजो समजे अने साध्वीओ उपर थी पोताना कार्यों नो बोजो उतारे तेमज व्याख्यान अने सूत्र वांचवानी छूट आपे, अभ्यास वधारवा माटे भलामण करे तो आज नुं वातावरण (अज्ञान, कुसंप, कलह कुशल विगेरे) फरीजतां वार लागशे नहीं। पछी समाज जोई शकशे के साध्वी संस्था केटलुं कार्य करी शके छे अने समाज ने केवी उपयोगी थाय छे आगलनी महासती शिरोमणि साध्वीजीओ ज्ञान में वधेली होवा थी चरित्र थी च्युत थता मोटा ऋषिओ ने पण सद्बोध थी मार्ग ऊपर लावी शक्या छे एवा अनेक दाखलाओ मौजूद छे। ते आजे कोई ना थी अजाण्युं नथी।

ते शक्ति आज पण नाश पामी नथी। जो तेने पुरती जगवड़ो करी देवा मां आवे तो निस्तेज बनेली शक्ति सतेज बने एमां कांई आश्चर्य नथी।

आज श्रावको पण साधुओ ना भरमाव्या थी जेम के पुरुष पद प्रधान छे ने स्त्री नीची छे तेथी साध्वियो प्रत्ये बहुज ओछी लागणी धरावे छे। तेमना व्याख्यान श्रवण थी पण श्रावको अभडाई जाय छे। खरुं पूछो तो तो साध्वी जी प्रत्ये भाग्येज कोई पूज्य भाव धरावता हशे। साधुओ ने भणाववा माटे सौ सौ रुपया ना पगारदार पंडितो त्यारे साध्विओ माटे वांचनो य नहीं। आतुं ओछी संकुचित दृष्टि कहेवाय।

हजू ए श्रावको चेते अने साध्वियो ने बहुमान नी दृष्टि थी जुए। साध्वीजीओ ना चौमासा अलग करावे अने तेमने अभ्यास माटे पुरती करे। जो साध्वी संस्था सुधरशे तो जरूर श्री

तेओना स्वार्थी हृदय नी अजाण विचारी सरल साध्विओ रखेने गुरूनो अविनय थई जाय, गुरु नाराज थइजाय एम बीती मने के कामने एओ श्री ना कार्यो करे छे। एवा कार्यो साध्विओ ना पासे थी कराववा ए शुं साधुओ ने घटित छे? आगलना साधुओ साध्विओ पासे थी शुं ए कार्यो करावता हता?

आगल वधीं ए तारक गणाता गुरुओ, साध्विओ प्रत्ये आज्ञा छोड़े छे के—साध्विओ थी सूत्र न वंचाय, व्याख्यान न अपाय। आवी रीत नी अटकायत थी साध्विजीओ संस्कृत अने मागधी अभ्यास करतां अटकी जाय छे। कारण ज्यारे सूत्रो न वांचवा होय ने व्याख्यान न आपवुं होय तो एवुं उच्च ज्ञान मेलवी शुं करे? आम निरुत्साह बनी अभ्यास मां ज्ञान मां आगल वधी शकती नथी। वलके संयम नुं रहस्य समजवुं दूर रही जाय छे। में घणी साध्वीजीओ ना मुख थी सांभल्युं छे के—अमोने व्याख्यान अने सूत्रो वांचवानी गुरु तरफ थी आज्ञा नथी जेथी व्याख्यान सांभलवा गुरूनी साथे ज चौमासा करीए छीए। ज्यारे पूछवा मां आवे के दर रोज व्याख्यान मां जता त्यारे दुखी हृदये जवाब आपी कहे के काम न होय तो अहगर। आवी सांभलनार ने आश्चर्य थया विना नहीं रहे। शुं मुनीराजो पोताना कार्यो करावता साध्विओ ने साथे चोमासुं कराता हशे? आवा कारणों ने लई क्रमे परिचय वधतो जाय छे अने छेवटे अति परिचय ना योगे जैन शासन ने लजवनारी गंदी वातो बहार आवेछे।

हजु पण पूज्य मुनि महाराजो समझे अने साध्विओ उपर थी पोताना कार्यो नो बोजो उतारे तेमज व्याख्यान अने सूत्र वांचवानी छूट आपे, अभ्यास वधारवा आश भलामण करे तो आज नुं वातावरण (अज्ञान, कुसंप, कलह कुथल विगेरे) फरीजतां वार लागशे नहीं। पछी समाज जोई शकशे के साध्वी संस्था केटलुं कार्य करी शके छे अने समाज ने केवी उपयोगी थाय छे आगलनी महासती शिरोमणि साध्वीजीओ ज्ञान में वधेली होवा थी चरित्र थी भ्रष्ट थता मोटा ऋषिओ ने पण सद्बोध थी मार्ग ऊपर लावी शक्या छे। एवा अनेक दाखलाओ मौजूद छे। ते आजे कोई ना थी अजाण्युं नथी।

ते शक्ति आज पण नाश पामी नथी। जो तेने पुरती सगवड़ो करी देवा मां आवे तो निस्तेज बनेली शक्ति सतेज बने एमां कांई आश्चर्य नथी।

आज श्रावको पण साधुओ ना भरमाव्या थी जेम के पुरुष पद प्रधान छे ने स्त्री नीची छे तेथी साध्वियो प्रत्ये बहुज ओछी लागणी धरावे छे। तेमना व्याख्यान श्रवण थी पण श्रावको भमडाइ जाय छे। खरुं पूछो तो तो साध्वी जी प्रत्ये भाग्येज कोई पूज्य भाव धरावता हशे। साधुओ ने भणाववा माटे सौ सौ रुपया ना पगारदार पंडितो त्यारे साध्विओ माटे पांचनो ए नहीं। आशुं ओछी संकुचित दृष्टि कहेवाय।

हजू ए श्रावको चेते अने साध्वियो ने बहुमान नी दृष्टि थी जुए। साध्वीजीओ ना चौमासा

साध्वी व्याख्यान निषेधः

श्रीमान् आनंदसागरजी म० आदि योग्य अनुवंदना वंदना सुखसाता वंचना, और आप जब विहार कर जयपुर आगये थे, वहां पर आये बाद तबियत की नरमाई से पत्र में विलंब हुआ, इसमें कजोर में आपके कहे अनुसार श्रावकों से बातचीत की और जोधपुर में भी सलाह मंगाई सब का सार यह है कि—जमाना शान्ति और संप का है, दोनों तरफ से विरोध न बढ़ना चाहिये, इसलिये न्याय की और हित की दृष्टि से आप इस लेख को सुधारलें। और आपने जो जो इस गच्छ के समुदाय के विरुद्ध लेख लिखे हैं उनको आप भी वापिस ले लें, ऐसी बहुत लोगों की इच्छा है इसीमें ही समाज का भला है। और साध्वी व्याख्यान खास आपका और मेरा व्यक्तिगत विवाद है, इसलिये आपने कापरड़ाजी में लेख भेजने का मंजूर किया था, उस मुजब आप लेख भेज देना, बाद में भी मेरा लेख भेज दूंगा, और १५ ट्रेक्ट भेजने का कहा था सो सब की २-२ कापी भेज देना। द: विनयसागर।

१— अब आपसे मेरा यही कहना है कि—साध्वी व्याख्यान का विषय आपके और मेरे बीच में व्यक्तिगत है जब आपने मेरे ऊपर लेख छपवाया था उसी समय आपको मेरे पास भेज देना था यही न्याय की बात है, परन्तु फिर पर भी मैंने मंगवाया तो भी आपने आज तक नहीं भेजा। जिसके ऊपर लेख छपवाना उसको न भेजना, यह आप आपकी कमजोरी साबित करता है, इसलिये यह जाहिर सूचना करता हूं कि—बिना विलंब वो भेज दें, उसका प्रत्युत्तर देने को तैयार हूं।

२—आपने अपने नाम से या आपके अनुयायी भक्तों के नाम से खरतर गच्छ के विरुद्ध जितने ट्रेक्ट आपके द्वारा निकाले गये हैं वो सब भेजने में देरी न करें, मैं आपको कापरड़ाजी साफ कर चुका हूं कि—जो जो व्यक्तिगत निन्दनीय मलिन और आक्षेप वाले आपके लेख जवाब में नहीं दूंगा। और आपके उपर वैसे आक्षेप भी न करूंगा सिर्फ शास्त्रीय प्रमाणानुसार युक्ति पूर्वक उत्तर दूंगा ट्रेक्ट भेजें।

३—इस पत्र के पहुंचने पर पन्द्रह दिन के अन्दर आप लेख व ट्रेक्ट भेजने में विलंब करें उपर लेख विज्ञापन के रूप में व जाहिर पत्रों में छपवाने का विचार किया था, परन्तु आपकी मित्रता के कारण न छपवा के पहले आपको भेजा है।

४—विशेष सूचना यह भी आपको कह देना उचित समझता हूं कि—आगे से किसी अन्य व्यक्ति के नाम से कोई भी लेख इस विषय का प्रकाशित न करावें, ऐसा न करने पर अन्य समाज में क्लेश फैलाने से आपकी मायाचारी व कमजोरी साबित होती है, यह मैंने शुद्ध बुद्धि से आपको इतनी सूचना की है। शुभम्

२६-४-४२

प्र. पं० मुनि मणिसागर

ब कलम विनयसागर

तीर्थ श्री कापरड़ा
ता: ६।५।

श्रीमान उपाध्यायजी श्री मणिसागर जी महाराज—मु० जयपुर

सादर वंदना पश्चात् विदित हो कि आपका पत्र तारीख २६-४-४२ का लिखा हुआ ता० १. ५. ४२ को रजिस्टर द्वारा मिला। पत्र पढ़ने से सब हाल मालूम हुआ। पर यह समझ नहीं आया कि एक ओर तो आपने मित्रता पूर्वक पत्र लिखा है और दूसरी ओर पन्द्रह दिन की धमकी दी है। खैर मैंने आपके पत्र का जवाब मित्रता के नाते दिया न कि धमकी के डर से। आगे ट्रेक्ट भेजने के विषय में आपने लिखा कि "हमको और हमारे साधु या श्रावकों को नहीं देते हो इत्यादि। पर ऐसी बात नहीं है ट्रेक्ट निकला तो सबसे पहले फलौदी एवं अजमेर वालों को ही भेजा था। कि जिन्हों के कारण लिखा गया था बाद बीकानेर जोधपुरादि अन्य स्थानों में भेजा गया था। यदि आपको न मिला हो तो बात दूसरी है। खैर। आज मैं मेरा लिखा ट्रेक्ट डाक द्वारा भेज रहा हूं। शेष के लिये कोशिश करूंगा।

आगे साध्वी के व्याख्यान के विषय में आपने भी वायदा कापरड़ाजी में किया था कि मैं मेरे शेष लेख आपको भेज दूंगा। वो आज पर्यन्त नहीं मिले हैं। यदि आप अपने लेख भेज दिखावें तो मैं उन लेखों का उत्तर लिख कर मेरे लेख में शामिल कर आपको भिजवाने का प्रयत्न करूंगा।

अजमेर की दादावाड़ी के विषय में मैंने आपको कापरड़ाजी में कहा था कि लेख देखने के बाद मैंने करीबन दस मास तक समाधान की कौशिश की। पर उसमें सफलता नहीं मिली। इतना ही क्यों पर फलौदी से आपके साधुओं द्वारा ऐसा जवाब मिला कि—जिससे लाचार हो मुझे ट्रेक्ट लिखना पड़ा जो आज की डाक से आपको भेजवाया जा रहा है।

बाद कापरड़ाजी में आपका मिलाप एवं वार्तालाप हुआ। तथा जब मैं फलौदी गया तो एक सज्जन ने विश्वास दिलाया कि मैं समाधान की कोशिश करूंगा बस इस विश्वास पर फिलहाल लिखा पढ़ी बंद करदी है।

आगे आपने यह भी लिखा है कि लेख विज्ञापन के रूप में व जाहिर पत्रों छपाने का विचार किया था। पर आपकी मित्रता के कारण न छपवा कर आपको भेजा है। यह आपकी महेरबानी है। मैं भी शान्ति का इच्छुक हूं। फिर भी विज्ञापन आदि छपा नेवाला तथा उसका जवाब देने वाले स्वतंत्र हैं

भवदीय—
ज्ञानसुन्दर

॥ श्री ॥

मणिसागर विनयसागर जयपुर ता० ज्ये. सु. ५ वा. गुरु संवत् १९९०.

श्रीमान् ज्ञानसुन्दरजी आदि योग्य अनुवंदना वंदना सुखसाता वंचना ।

१—हमने यहां से ज्येष्ठ सुदि ४ को आपके नाम का रजिस्टर पत्र दिया था सो मिला होगा, बहुत रोज हुये उस रजिस्टर पत्र का अभी तक जवाब नहीं, तथा ट्रेक्ट भी आपने अभी तक भेजे नहीं, इस तरह ट्रेक्ट छपवाकर समाज में मिथ्या भ्रम फैलाना निन्दनीय लेख लिख कर लोगों के कर्म बंधन करवाना यह आपको उचित नहीं है ।

२—वादविवाद वाले चर्चा के लेख जिसके ऊपर छपाया जाय उसको पहिले भेजने का नियम है, जिस पर आपने मेरे ऊपर लेख छपवा कर मेरे को नहीं भेजा समाज में प्रचार किया यह आपकी बड़ी मायाचारी की कमजोरी साबित होती है, यदि आपने सत्यता की ताकत होती तो मेरे पास लेख भेजने में देरी नहीं करते, मैंने आपको कापरड़ाजी तीर्थ में खुलासा कह दिया था कि—आपका लेख आने पर मैं जीवानुशासन के पाठ का खुलासा लिख भेजूंगा यह बात आपने मंजूर की थी, जिस पर भी आपने मेरे को लेख नहीं भेजा, अधूरा लेख छपवा कर समाज में उत्सूत्र प्ररूपणा करके माया जाल फैलाया, अब आप अपना लेख भेजने में डरते हो इससे ही आप का लेख मिथ्या साबित है ।

३—तपगच्छ के साधुजी के पास से खरतरोत्पत्तिभाग १-२-३-४ एक श्रावक को मिली उसने पढ़ी मेरे को कहता था कि ज्ञानसुन्दरजी ने खरतरोत्पत्ति भाग १-२-३-४ में बहुत निन्दनीय हलके तुच्छ शब्द लिखे हैं खरतर गच्छ के पूर्वाचार्यों की बहुत निन्दा की है, बिना शिर पैर की बनावटी बातें लिखी है उसमें प्रथम करेमिभन्ते छ कल्याणक आदि बहुत बातों का उल्लेख किया है इस किताब के पढ़ने पर मालूम होता है कि ज्ञानसुन्दरजी के तीव्र कषाय का उदय है तथा खरतर गच्छ के साथ पूरा द्वेष भाव है, इस जमाने में निन्दनीय भाषा में लिखने वाले की जैन समाज कुछ भी कीमत नहीं करती, जिसको मध्यस्थ दृष्टि से सत्य बात निर्णय करना हो तो सभ्यता के साथ लेख लिखे, परन्तु जिसके अन्दर द्वेष भाव भरा हुआ होता है वो निन्दनीय गालियों से काम लेता है, यही दशा ज्ञानसुन्दरजी ने अपनी कीताब में करी है इत्यादि कई बातें कही है इस पर मेरा आप से यह कहना है कि—अगर आपकी यही दशा होतो सब कितायें जल शरण कर दीजिये, अन्यथा अब मेरे को किताब भेजने में विलंब न कीजिये यही मेरा आग्रह है ।

४—मेरे को यह भी एक आपकी मायाचारी का प्रपञ्च मालूम होता है कि आप अपनी

अपने गच्छ की समाचारी में वीरप्रभु के छः कल्याणक लिखे हैं आगमों में भी यही बात है आपके किसी भी पूर्वाचार्य ने इसका निषेध नहीं किया, जिस पर भी आप दुराग्रह करके इसका निषेध करने के लिये जिन वल्लभसूरिजी के ऊपर मिथ्या आक्षेप करते हैं यह भी आपकी बड़ी भूल है। इसका विस्तार से समाधान हमने " षट् कल्याणक निर्णयः " नामक ग्रन्थ में लिख दिया है और खरतरगच्छ की उत्पत्ति जिनेश्वर सूरिजी से हुई है जिस पर भी जिनदत्तसूरिजी से होने का ठहराने के लिये आपने उन महाराज पर कई तरह के मिथ्या आक्षेप किये हैं। यह भी आपका हठाग्रह अनुचित है।

तथा निशीथ चूर्णि, बृहत्कल्पचूर्णि, वृत्ति, दशाश्रुतस्कन्ध चूर्णि, कल्पनिर्युक्ति, नन्दपन्नत्ति, सूरपन्नत्ति, जंबूद्वीपपन्नत्ति आदि शास्त्रों में अधिक महीना के दिनों की गिनती ले करके पर्युषणापर्व करने का कहा है। मास प्रतिबद्ध लौकिक पर्वों की तरह पर्युषणा भी मास प्रतिबद्ध नहीं है, पर्युषणापर्व तो वर्षा काल में जीव दया के लिये दिनों की गिनती के हिसाब से करने का कथन है, इस बात का भावार्थ समझे बिना अथवा जानते हुए भी अभिनिवेशिक हठाग्रह से लौकिक पर्वों की तरह पर्युषणापर्व को भी मास प्रति बद्ध ठहराने के लिये आपने जैन ध्वज ता: १४-६-३६ में जो जो बातें लिखी हैं वे सब जिनाज्ञा विरुद्ध होने से उन्मार्ग बढ़ाने वाली हैं इस विषय संबन्धी आपकी और आपके साथियों की सब शंकाओं का समाधान सहित अनेक शास्त्र प्रमाणानुसार हमने " बृहत्पर्युषणा निर्णयः " में खुलासा लिख दिया है।

४ वाचनाचार्य पद्म प्रभ के साथ शास्त्रार्थ में जिन पतिसूरिजी की हार होने का तथा माफी मांगने का दृश्य बताने वाला चित्र के साथ आपने एक ट्रेक्ट छपवाया है वह सर्वथा मिथ्या है। ऐसे तो कोई कहेगा कि मैंने जगत के सर्व पंडितों को वाद में जीत लिये थे, मगर पूर्व पक्ष उत्तर पक्ष से विषय प्रतिपादन का संपूर्ण विवरण वाला प्रमाण बिना उसका कहना कोई भी बुद्धिमान नहीं मान सकता, इसी तरह से किसी विषय के विवरण का प्राचीन प्रमाण बतलाये बिना आपका यह ट्रेक्ट छपवाना समाज में मिथ्या भ्रम फैलाने वाला ठहरता है। और विशेषता में सत्य बात तो ऐसी है कि पृथ्वीराज की सभा में नियमानुसार बड़े २ विद्वानों के समक्ष जिनपति-सूरिजी से शास्त्रार्थ करते हुए आपके पद्मप्रभजी की बड़ी भारी हार हुई थी जिसका विशद विवरण सहित आपके उपकेशगच्छ की पट्टावलीसे भी प्राचीन प्रमाण बतलाने को हम तैयार हैं। अतः आपका उपकेशगच्छ पट्टावली का प्रमाण बतलाना भी मिथ्या ठहर जावेगा।

इन सब बातों का खुलासा पत्रव्यवहार से या चातुर्मास पश्चात् सभा में नियमानुसार शास्त्रार्थ करने को जैसे आप चाहें वैसे करने को मैं तैयार हूं। दो महीनों में इसका खुलासा उत्तर दें। इसमें बहाने बाजी से टालम टूल न करें, विशेषता में यह भी याद रक्खें कि व्यर्थ निन्दनीय लेख छपवाकर प्रचार करके जैन समाज में कलेश फैलाने की आप अपनी रीति को छोड़ दें (अब आप आचार्य बन गये हैं) यही आपसे मेरा भी प्रेम से आग्रहपूर्वक लिखना है।

मणिसागर सूरि

॥ श्री ॥

मणिसागर विनयसागर जयपुर द्वि० ज्ये. सु. ५ वा. गुरु संवत् १९९९.

श्रीमान् ज्ञानसुन्दरजी आदि योग्य अनुवंदना वंदना सुखसाता वंचना।

१—हमने यहां से ज्येष्ठ सुदि ४ को आपके नाम का रजिस्टर पत्र दिया था सो मिला होगा, बहुत रोज हुये उस रजिस्टर पत्र का अभी तक जवाब नहीं, तथा ट्रेक्ट भी आपने अभी तक भेजे नहीं, इस तरह ट्रेक्ट छपवाकर समाज में मिथ्या भ्रम फैलाना निन्दनीय लेख लिख कर लोगों के कर्म बंधन करवाना यह आपको उचित नहीं है।

२—वादविवाद वाले चर्चा के लेख जिसके ऊपर छपाया जाय उसको पहिले भेजने का नियम है, जिस पर आपने मेरे ऊपर लेख छपवा कर मेरे को नहीं भेजा समाज में प्रचार किया यह आपकी बड़ी मायाचारी की कमजोरी साबित होती है, यदि आपने सत्यता की ताकत होती तो मेरे पास लेख भेजने में देरी नहीं करते, मैंने आपको कापरड़ाजी तीर्थ में खुलासा कह दिया था कि—आपका लेख आने पर मैं जीवानुशासन के पाठ का खुलासा लिख भेजूंगा यह बात आपने मंजुर की थी, जिस पर भी आपने मेरे को लेख नहीं भेजा, अधूरा लेख छपवा कर समाज में उत्सूत्र प्ररूपणा करके माया जाल फैलाया, अब आप अपना लेख भेजने में डरते हो इससे ही आप का लेख मिथ्या साबित है।

३—तपगच्छ के साधुजी के पास से खरतरोत्पत्तिभाग १-२-३-४ एक श्रावक को मिली उसने पढ़ी मेरे को कहता था कि ज्ञानसुन्दरजी ने खरतरोत्पत्ति भाग १-२-३-४ में बहुत निन्दनीय हलके तुच्छ शब्द लिखे हैं खरतर गच्छ के पूर्वाचार्यों की बहुत निन्दा की है, बिना शिर पैर की बनावटी बातें लिखी हैं उसमें प्रथम करेमिभन्ते छ कल्याणक आदि बहुत बातों का उल्लेख किया है इस किताब के पढ़ने पर मालूम होता है कि ज्ञानसुन्दरजी के तीव्र कषाय का उदय है तथा खरतर गच्छ के साथ पूरा द्वेष भाव है, इस जमाने में निन्दनीय भाषा में लिखने वाले की जैन समाज कुछ भी कीमत नहीं करती, जिसको मध्यस्थ दृष्टि से सत्य बात निर्णय करना हो तो सभ्यता के साथ लेख लिखे, परन्तु जिसके अन्दर द्वेष भाव भरा हुआ होता है वो निन्दनीय गालियों से काम लेता है, यही दशा ज्ञानसुन्दरजी ने अपनी किताब में करी है इत्यादि कई बातें कही है इस पर मेरा आप से यह कहना है कि—अगर आपकी यही दशा होतो सब किताबें जल शरण कर दीजिये, अन्यथा अब मेरे को किताब भेजने में विलंब न कीजिये यही मेरा आग्रह है।

४—मेरे को यह भी एक आपकी मायाचारी का प्रपञ्च मालूम होता है कि आप अपनी

બુદ્ધ અને મહાવીર

પ્રો. એર્ન્સ્ટ લોઇમા
જર્મન

અનુવાદ કરનાર

નરસિંહભાઇ ઇશ્વરભાઇ
'પાટીદાર'

પ્રકાશક

જૈન સાહિત્ય સંશોધક કાર્યાલય.

સ્થાનઃ ભારત જૈન વિદ્યાલય, પૂના સીટી.

ક્રમ સં. ૧૯૮૧] પ્રથમાવૃત્તિ. [ઈ. સ. ૧૯૨૫